bdkbZ 5 lekurk

bdkbZ dh :ijs[kk

5.1 प्रस्तावना

5.2 समानता बनाम असमानता

5.2.1 समानता हेतु संघर्ष

5.3 समानता क्या है?

5.4 समानता के आयाम

5.4.1 कानूनी समानता

5.4.2 राजनीतिक समानता

5.4.3 आर्थिक समानता

5.4.4 सामाजिक समानता

5.5 समानता का स्वतंत्रता व न्याय से संबंध

5.5.1 समानता व स्वतंत्रता परस्पर विरोधी रूप में

5.5.2 समानता व स्वतंत्रता एक दूसरे की पूरक हैं

5.5.3 समानता और न्याय

5.6 समानता की ओर

5.7 समसामयिक विश्व में असमानता हेतु दलील

5.8 समानता की मार्क्सवादी अवधारणा

5.9 सारांश

5.10 अभ्यास

5-1 iLrkouk

सामाजिक, आर्थिक, नैतिक व राजनीतिक दर्शन संबंधी मूल संकल्पनाओं में, समानता की संकल्पना से आधिक भ्रामक और विस्मयकारी कोई और नहीं, क्योंकि यह न्याय, स्वतंत्रता, अधिकार, स्वामित्व, आदि सदृश अन्य सभी संकल्पनाओं में गण्य है। गत दो हज़ार वर्षों के दौरान, यूनानवासियों, प्राचीन यूनानी दर्शनशास्त्र के अध्येताओं, ईसाई पादरियों द्वारा समानता के अनेक आयामों का विस्तारपूर्वक प्रतिवादन किया गया, जिन्होंने भिन्न–भिन्न रूप से और सामूहिक रूप से इसके एक न एक पहलू पर ज़ोर दिया। उदारवाद व मार्क्सवाद के प्रभाववश, समानता ने एक पूर्णरूप से भिन्न सम्पृक्तार्थ ग्रहण कर लिया। नारी–अधिकारवाद, पर्यावरणवाद सरीखे समसामयिक सामाजिक आन्दोलन इस संकल्पना को एक नया अर्थ प्रदान करने का प्रयास कर रहे हैं।

बुनियादी रूप से, समानता एक मूल्य है और एक सिद्धांत, जो अनिवार्यतः आधुनिक व प्रगतिशील है। यद्यपि समानता विषयक बहस तो सदियों से चलती आयी है, आधुनिक समाजों का ख़ास यह लक्षण है कि अब हम समानता को सच अथवा स्वाभाविक चीज़ नहीं मानते। समानता को आधुनिक क्या है

के मापदण्ड के रूप में और आधुनिकीकरण की पूरी प्रक्रिया को राजनीतिक समाजवाद के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। आधुनिक राजनीति और आधुनिक राजनीतिक संस्थाओं को सदा सामाजिक दबावों का विषय बनाया जाता है ताकि वे नृजाति, लैंगिक पहचान अथवा आयु पर ध्यान न देते हुए अवसरों को समान रूप से बढ़ायें। समानता इस अर्थ में एक आधुनिक मूल्य है कि सार्वत्रिक नागरिकता आधुनिक प्रजातंत्रों में सभी राजनीतिक विचारधाराओं का एक मुख्य अभिलक्षण बन चुकी है। पुनः, समानता को उग्र उन्मूलनवादी सामाजिक परिवर्तन हेतु एक मानदण्ड के रूप में भी लिया जा सकता है। यह लोकतांत्रिक राजनीति के विकास से संबंधित है। आधुनिक समाज समानता के सिद्धांत के प्रति वचनबद्ध है और अब उन्हें स्वतः न्याय्य के रूप में असमानता की दरकार नहीं है। अमेरिकी व फ्रांसीसी क्रांतियों द्वारा घोषित समानता का सिद्धांत समाजों के पुनर्गठन हेतु सामाजिक परिवर्तन के सभी आधुनिक रूपों व सामाजिक आन्दोलनों का मुख्य घोषणापत्र बन गया है।

5-2 lekurk cuke vlekurk

इससे पहले कि हम समानता के अभिप्राय पर चर्चा करें, हमें यह समझ लेना चाहिए कि समानता एक सापेक्ष संकल्पना है। समानता हेतु माँग हमेशा ही अपने–अपने जमाने में व्याप्त असमानताओं के खिलाफ रही है। सामाजिक असमानता की विद्यमानता संभवतः इतनी पुरानी है जितना कि समाज, और असमानताओं की प्रकृति व कारण के बारे में तर्क–वितर्क करना राजनीति–दर्शन का एक प्राचीन विषय है। चिर प्रतिष्ठित यूनान में अरस्तू ने अपनी पुस्तक *पॉलिटिक्स* में तीन सामाजिक वर्गों को पहचानना और विवेकपूर्ण व नागरिक क्षमताओं की भाषा में *नागरिकों* व *दासों, पुरुषों* व *स्त्रियों* के बीच सार्थक भेद पाया। *पॉलिटिक्स* में भागीदारी सिर्फ़ नागरिकों तक सीमित थी। इसी प्रकार, हमारे हिन्दू समाज में, शास्त्रीय उद्धरण के अनुसार, समाज चार वर्गों (श्रेणियों) में बँटा था : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। सभी अधिकार व कर्तव्य इसी वर्गीकरण पर आधारित थे। मध्यकालीन सामन्तवाद के दौरान, कानूनी विशेषाधिकार सामाजिक स्थिति व जन्म पर आधारित थे। संक्षेप में, विभिन्न प्रकार की असमानताएँ लम्बे समय से कायम रही हैं, जिन्होंने इस धारणा को बढ़ावा दिया कि सामाजिक संबंधों में असमानता अपरिहार्य है। दरअसल, पूर्व–अठारहवीं शती की शिक्षाएँ यह तर्क देती थीं कि मनुष्य स्वभावतः असमान है और एक स्वाभाविक मानव पदानुक्रम विद्यमान है। विभिन्न विचारधाराओं ने असमानता को उच्च प्रजाति, वंशक्रम, आयु, लिंग, धर्म, सैन्य शक्ति, संस्कृति, समृद्धि, ज्ञान, आदि के आधारों पर ज़ायज ठहराया। टर्नर के अनुसार, असमानता बहु–आयामी होती है और असमानता के एक पहलू का विलोपन सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक असमानताओं के अन्य पहलुओं की अत्युक्ति की ओर प्रवृत्त करता है। वास्तव में, सभी मानव समाजों की विशेषताएँ वर्ग, प्रतिष्ठा, सत्ता व लिंगभेद के शब्दों में सामाजिक असमानताओं के किसी रूप द्वारा ही बतलाई जाती हैं। समानता की अवधारणा का अध्ययन करते समय, आधुनिक समाज में एक सार्वजनिक मूल्य के रूप में समानता और व्यावहारिक स्तर पर समानता के बीच विवाद को, सभी मानव समाजों की हक़ीक़त के रूप में, हमेशा दिमाग में रखा जाना चाहिए।

5-2-1 lekurk gr| l?k"k

यदि असमानता एक सार्वभौम तथ्य रहा है, विशेषाधिकारों व जन्म पर आधारित असमानताओं के खिलाफ़ विरोध भी उनके उद्‌गमन काल से ही व्यक्त किया जाता रहा है। इस प्रकार, पाश्चात्य राजनीतिक धारणाओं के इतिहास में, समानता का सिद्धांत व्यवहारतः इतना पुराना है जितना कि

उसका विलोम। उदाहरण के लिये, यूनानी दर्शन में सबसे प्रमुख प्रतिभावान व्यक्ति ज़ीनो था जिसने स्टॉइक स्कूल की स्थापना की और मनुष्यों के बीच समानता का समर्थन किया। स्टॉइक्स ने निष्कर्ष निकाला कि सभी मनुष्य विचार शक्ति रखते हैं और मनुष्य अन्य प्राणियों से भिन्न है, संगठित है। मानवता श्रेणी को स्थान नहीं देती। इस प्रकार सभी मनुष्य, मनुष्य रूप में समान हैं। स्टॉइक दार्शनिकों ने सार्वभौम भ्रातत्व का विचार दिया और वे दासता के बरखिलाफ़ थे। रोमन साम्राज्य द्वारा प्रजा के कानून की घोषणा एक दूसरा रास्ता था जिसपर चल कर रोमवासियों ने इस सिद्धांत को लागू करने का प्रयास किया कि सभी मनुष्य समान हैं और उसके विस्तार के रूप में, उन्होंने व्यक्तियों के साथ–साथ सभी समुदायों को भी नागरिकता प्रदान की। चरमोत्कर्ष सन् 212 ईस्वी में हुआ, जब सम्राट कैराकाला की एक उल्लेखनीय राजाज्ञा द्वारा उक्त साम्राज्य के सभी स्वतंत्र निवासियों को रोम की नागरिकता प्रदान कर दी गई। इस प्रकार, सन्त पॉल ने जिलेशिअन्स से कहा 'न कोई यहूदी है न ही कोई यूनानी, न कोई बंधक है न ही कोई स्वतंत्र, न कोई पुरुष है न ही कोई स्त्री, क्योंकि ज़ीसस क्राइस्ट के अन्तर में तुम सब एक ही हो।' पाँचवीं से चौदहवीं शताब्दी तक, समानता हेतु माँग एक पुकार थी दासता, मध्यकालीन वर्ग–विभाजन अथवा क्रम–विन्यास और वंशानुक्रमित कुलीनता के खिलाफ़ तथा चर्च में जीवनयात्रा अवसरों की तुल्यता। 15वीं से 17वीं शताब्दी तक, समानता हेतु आवाज भूस्वामियों की सामाजिक स्थिति व धार्मिक असहिष्णुता के खिलाफ रही और प्युअरिटन्स, लैवलर्स, नैसर्गिक अधिकार सिद्धांत व जॉन लॉक द्वारा उठायी गई। साथ ही पुनर्जागरण व धर्म–सुधार आन्दोलनों ने जन्म पर आधारित पादरी–वर्ग और अभिजातवर्ग के कानूनी विशेषाधिकारों के खिलाफ़ एक ज़ोरदार आवाज़ उठायी और जन्म से समानता की माँग रखी। यह दृढ़कथन कि सभी मनुष्य समान रूप से जन्मे हैं, विश्वभर के घोषणापत्रों में अंकित किया जाना था। 1649 व 1688 में ब्रिटेन में, 1778 में अमेरिका में तथा 1789 में फ्रांस में क्रांतियों ने जन्म सिद्ध समानता के अधिकार को अपना मुख्य घोषणापत्र बनाया। 'मनुष्य स्वतंत्र व समान जन्मे हैं तथा वे अपने अधिकारों में स्वतंत्र व समान हैं।' इस चरण में, समानता हेतु माँग अभिजात वर्ग के विशेष प्राधिकारों की समाप्ति तथा अमीरवर्ग के साथ राजनीतिक व कानूनी समानता की उपलब्धि के अनुरूप थी। इसका अर्थ सिर्फ़ न्यायिक समानता था, यानी 'सभी मनुष्य समान जन्मे हैं और कानून की नज़र में वे समान हैं।' चाहे ब्रिटेन हो या फ्रांस या अमेरिका, मुद्दा जो दाँव पर था वो था कानूनी अधिकारों की एकरूपता की शक्ल में समानता। जैसा कि पहले कहा गया, चूँकि समानता हेतु माँग मुख्य रूप से मध्यवर्ग द्वारा उठायी गयी जो समृद्धि प्राप्त कर चुका था, परन्तु उसको कानूनी दर्जा हासिल नहीं था और जो अभिजातवर्ग के साथ राजनीतिक व कानूनी समानता पाने का इच्छुक था, कानूनी समानता हेतु माँग ने उद्देश्य भलीभाँति पूरा किया।

समानता के आर्थिक व सामाजिक आयाम उन्नीसवीं शती के दौरान उभर कर आये जो एक ओर पूँजीवादी/औद्योगिक वर्गों तथा दूसरी ओर कामगारों व किसानों के बीच विवादों व संघर्षों का परिणाम था। आर्थिक मामलों में राज्य की अहस्तक्षेप–सिद्धांत नीति ने समाज में व्यापक आर्थिक विभक्तताओं को जन्म दिया। परिणामस्वरूप, कानूनी समानता के साथ ही, जे.एस. मिल, टी.एच. ग्रीन, बेबफ, कार्ल मार्क्स आदि जैसे उदारवादी व मार्क्सवादी लेखकों द्वारा समान रूप में आर्थिक व सामाजिक समानता हेतु माँग भी उठायी गई। इसी के साथ, राजनीतिक समानता हेतु माँग भी और बुलन्द हो गयी। विधिक उन्मुक्ति विस्तार आन्दोलन औद्योगिक क्राँति का ही अंकुरण था, जिसने नगरीय मध्यवर्ग की सामाजिक शक्ति बढ़ायी और जनसंख्या के एक बड़े भाग को कारखाना मज़दूरों में तब्दील कर दिया। ब्रिटेन में 1832, 1876 व 1884 के सुधार कार्य राजनीतिक समानता की ओर कदम ही थे।

बीसवीं शती में, समानता हेतु माँग और दुराग्रही हो गई। आज यह उच्च रूप से उद्योगपति समाज की विशेषत्वसूचक सामाजिक–आर्थिक गतिशीलता हेतु अनिवार्य शर्त बन गई है। साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के खिलाफ आन्दोलन, जाति–भेदभाव के खिलाफ आन्दोलन, रूस, चीन व पूर्वी यूरोपियाई देशों में समाजवादी क्रांतियों ने समानता का मुद्दा सबसे आगे ला रखा। 1948 में सार्वभौम मानवाधिकार घोषणा ने समानता की पहचान को बढ़ावा दिया जिसको इस समय तक तीसरी दुनिया के उन लोगों हेतु औद्योगीकृत देशों के सभी सामाजिक स्तरों का लक्ष्य मान लिया गया था जिनके साथ भेदभाव किया जाता था, इससे सामाजिक आर्थिक समानता पर आधारित एक अन्तर्राष्ट्रीय समाज के अन्त्योदय में मदद मिली।

5-3 lekurk D;k g\

जबकि समानता अनेक संकल्पनाओं में से एक है (अन्य हैं अधिकार, स्वतंत्रता, न्याय आदि) यह ऐसे संसार में एक सूक्ष्म संकल्पना है, जहाँ मनुष्यों के बीच अनेक भेद व्याप्त हैं। हर आधुनिक राजनीतिक संविधान एक बुनियादी कानून के रूप में उत्कीर्ण मानव समानता का कुछ न कुछ अभिप्राय अवश्य रखता है और कितने भी महत्त्व का रहा हो, उसके राजनीति–सिद्धांत ने सामाजिक–आर्थिक समानता की प्रकृति व व्यवहार्यता में योगदान दिया है। तथापि, इसको स्पष्ट रूप से परिभाषित करना उतना ही कठिन है जितना कि इसे राजनीतिक रूप से प्राप्त करना। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, समाज की संकल्पना सापेक्ष है और यह सिर्फ़ एक निश्चित संदर्भ में ही समझी जा सकती है। समानता व्यवहार व पुरस्कार की पहचान नहीं है। व्यवहार की कोई परम पहचान हो ही नहीं सकती, जब तक कि अभावों, क्षमताओं व आवश्यकताओं में मनुष्य मनुष्य से भिन्न है। जैसा कि लास्की ने लिखा, 'समाज का उद्देश्य आरम्भ से ही निष्फल रहेगा यदि एक गणितज्ञ का स्वभाव राजगीर के स्वभाव वाली सदृश्य प्रतिक्रिया से अनुभव किया जायेगा।' साथ ही, प्रकृति–प्रदत्त असमानताएँ एक अपरिहार्य तथ्य हैं और यह समाज को स्वीकारना ही पड़ता है। *असमान व्यक्तियों के साथ समान रूप से व्यवहार* करने से अन्याय उतना ही उत्पन्न होता है जितना कि *समान लोगों के साथ असमान रूप से* बर्ताव करने से। और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रूप से, स्वाभाविक असमानताओं से परे, समाज द्वारा उत्पन्न असमानताएँ हैं– जन्म, समृद्धि, ज्ञान, धर्म, आदि पर आधारित असमानताएँ। समानता हेतु दावे कुछ निश्चित विद्यमान सामाजिक–आर्थिक असमानताओं के औचित्य को ठुकराते हुए हमेशा नकारात्मक ही रहे हैं। जब उदारवाद ने इस बात पर बल दिया कि सभी मनुष्य जन्म से ही समान हैं, उसका आशय था सम्पत्ति धारण–संबंधी राज–प्रदत्त विशेषाधिकार को चुनौती देना। मनुष्य के अधिकार–संबंधी घोषणा ने स्पष्टतया यह स्वीकार किया कि श्रेष्ठतर योग्यता और चारित्रिक गुणादि समृद्धि, सम्मान व शक्ति भेद हेतु एक उचित आधार हैं। बीसवीं सदी के दौरान, ऐसी किसी भी शैक्षणिक व सामाजिक व्यवस्था को हम ढाते रहे हैं जिसमें उन्नति के अवसर पारिवारिक साधनों पर निर्भर थे और उसके स्थान पर ऐसी व्यवस्था लाते रहे हैं, जो परीक्षा में प्रवीणता को एक मुख्य मापदण्ड बनाये। इस प्रकार हमें जो बात दिमाग़ में रखनी है, वो है कि प्रसंग से बाहर, समानता किसी सामाजिक आदर्श हेतु एक खोखला ढ़ाँचा है। यह तभी सार्थक होगी जब वह विशेषीकृत होगी। इतिहास की गति वृहत्तर समानता की ओर नहीं है, क्योंकि जितनी ही तीव्रता से हम एक असमानता को दूर करते हैं हम दूसरी को जन्म दे देते हैं : अन्तर यह है कि हम जिसका परित्याग करते हैं, वह अन्याय्य होती है जबकि जिसको हम जन्म देते हैं वह तर्कसंगत लगती है। सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक व अन्य योग्यताओं को हमेशा हर नयी पीढ़ी द्वारा सुदृढ़ीकृत एवं पुनर्प्रतिपादित किए जाने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, समानता–बोध निरंतर हर यथापूर्व स्थिति की बुनियादों को कमजोर करता रहता है।

स्वतंत्रता की भाँति, समानता को भी उसके नकारात्मक व सकारात्मक पहलुओं में समझा जा सकता है। जब से समानता–बोध उत्पन्न हुआ है, यह कुछ निश्चित विशेषाधिकारों को समाप्त किए जाने में लगा है, चाहे ये सामंती रहे हों या सामाजिक या आर्थिक या कोई और। इस प्रकार नकारी रूप से, समानता 'ऐसी विशेषाधिकारों की समाप्ति' से ही सम्बद्ध थी। सकारी रूप से, इसका अभिप्राय था 'अवसर की उपलब्धता' ताकि हर व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व विकास हेतु बराबर मौका मिले। इस संदर्भ में समानता का मतलब स्पष्ट करते हुए, लास्की लिखते हैं कि समानता का अर्थ है :

i) विशेष प्राधिकारों का अभाव। इसका अर्थ है कि एक व्यक्ति की इच्छा किसी भी दूसरे वयक्ति की इच्छा के ही समान है। इसका मतलब है अधिकारों की समानता।

ii) कि सभी के लिए यथेष्ट अवसर सामने लाए जाएँ। यह उस प्रशिक्षण पर निर्भर करता है जो सभी नागरिकों को प्रदान किया जाता है। चूँकी यह शक्ति समाज में आखिरकार जिसका महत्त्व है, ज्ञान को सदुपयोग की शक्ति है; कि शिक्षा–वैषम्य उस शक्ति के प्रयोग–क्षमता वैषम्य में उससे बढ़कर प्रकट होता है। सभी को सुअवसर दिया जाना चाहिये कि वह अपने व्यक्तित्व की विवक्षाओं को स्पष्टतया अनुभव कर सकें।

iii) सामाजिक लाभों तक सभी की पहुँच हो और किसी को भी किसी भी आधार पर रोका नहीं जाना चाहिए। जन्म से अथवा कुल के कारण व पैतृक कारणों से असमानताएँ तर्कहीन हैं।

iv) आर्थिक व सामाजिक शोषण का अनस्तित्व।

इसी प्रकार, बार्कर लिखते हैं कि समानता का विचार एक व्युत्पन्न मूल्य है – व्यक्तित्व विकास के सर्वोच्च मूल्य से व्युत्पादित – सभी में एकसा और एकसमान, परन्तु सभी में अपनी भिन्न पद्धति और अपनी भिन्न गति से। उनके अनुसार, 'समानता का सिद्धांत, तदनुसार यह अर्थ रखता है कि अधिकारों के रूप में मुझे जिन किन्हीं भी शर्तों की गारण्टी दी गई है, दूसरों को भी और उसी अनुपात में गारण्टी दी जायेगी तथा यह भी कि दूसरों को जो भी अधिकार दिए जाते हैं, मुझे भी दिये जाएँगे'। रैफेल के अनुसार, 'समानता का वास्तविक ... बुनियादी इंसानी ज़रूरतों की समान संतुष्टि का अधिकार है, जिसमें उन क्षमताओं को विकसित करने व प्रयोग करने की आवश्यकता शामिल है जो विशेषरूप से मानवीय हैं'। ई.एफ. कैरिट के अनुसार, 'समानता बस लोगों को समान समझना ही है, जब तक कि *आवश्यकता, क्षमता* अथवा *योग्यता* जैसी प्राथमिकता के अलावा कोई कारण विरुद्ध प्रभाव वाला न दर्शाया गया हो'। अभी हाल ही में, ब्रायन टर्नर ने अपनी पुस्तक *इक्वालिट* में समसामयिक विश्व के प्रसंग में समानता का एक सुबोध अर्थ प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार, समानता की अवधारणा में निम्नलिखित बातें शामिल की जानी चाहिएँ :

i) लोगों की आधारभूत समानता

ii) अवसर की समानता

iii) उन दशाओं की समानता जिनमें रहकर जीवन–दशाओं को समान बनाने का प्रयास हो

iv) परिणामलब्धता की समानता।

प्रथम प्रकार की समानता यानी, *लोगों की समानता,* उन सांस्कृतिक, धार्मिक व नैतिक परम्पराओं में सर्वमान्य है जो 'ईश्वर की दृष्टि में सभी समान हैं' जैसे कथनों में व्यक्त की जाती हैं। यह मनुष्य के रूप में मनुष्य की समानता से संबंधित है; 'मानव स्वभाव', 'मानव गरिमा', 'व्यक्तित्व' अथवा 'आत्मा' पुकारी जाने वाली कुछ चीज जिसके आधार पर उनके साथ बुनियादी रूप से बराबर जैसा सलूक

किया जाना चाहिए। इस प्रकार की समानता वाली एक आधुनिक धारणा मार्क्सवाद में दिखाई देती है जब वह 'मानव सत्त्व' की बात करता है। मार्क्सवादी परम्परा में, यह दावा किया जाता है कि सभी मनुष्य *बदस्तूर* परिभाषित हैं, यानी सभी मनुष्य सुविज्ञ, सज्ञान और वास्तविक कारक हैं। यह निश्चयपूर्वक कहता है कि 'मनुष्य अपने अस्तित्व से ही एक सम्पूर्ण स्वतंत्र प्राणी हैं जो स्वयं को प्रकृति के एक सदा वर्धमान नैपुण्य और सदा उत्तरोत्तर सार्वभौम संसर्ग, स्वायत्तता व संज्ञान की दिशा में अपने ही कार्यकलाप से बनाता है।' साथ ही, आर.एच. टॉनी जैसे लेखकों ने सामाजिक समानता के प्रति वचनबद्धता हेतु एक धार्मिक आधार प्रदान करने के लिए समाजवाद और ईसाइयत को प्रायः एक–दूसरे से जोड़ा। तथापि, इस प्रकार की समानता को सामाजिक–आर्थिक समानता की धारणा पर आधारित सामयिक कल्याणकारी राज्य में महत्त्व नहीं दिया जाता है।

समानता का दूसरा अर्थ *अवसर की समानता* के रूप में समानता हेतु सर्वाधिक सर्वमान्य तर्क से जुड़ा है। इसका अर्थ है कि महत्त्वपूर्ण सामाजिक संस्थाओं तक पहुँच सार्वभौमिकता के आधार पर सभी के लिए सुगम हो, खासकर उपलब्धि और योग्यता द्वारा। अवसर की समानता के विषय में बहस उन आधुनिक शैक्षणिक संस्थाओं के विकास में विशेषरूप से महत्त्वपूर्ण रही है, जहाँ प्रोत्साहन और प्राप्ति पैतृक व वर्ग पृष्ठभूमि पर ध्यान दिए बग़ैर बुद्धि, कुशलता व योग्यता पर आधारित सिद्धांत में निहित होते हैं। इस प्रकार की समानता गुणतंत्र में विश्वास रखती है जहाँ समाज की व्यावसायिक संरचना उपलब्धि की सार्वभौम मानदण्डों की भाषा में उत्तमता के आधार पर पूरी होती है, न कि आयु, लिंग समृद्धि, जाति, धर्म, आदि के आधार पर।

तीसरे, समानता की संकल्पना *दशाओं की समानता* संबंधी धारणा से गहरे रूप से जुड़ी है और कुछ–कुछ अवियोज्य है। अवसर की समानता उनका सम्मान करती है जो योग्यतासम्पन्न हैं और जो किसी भी प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति में व्यक्तिगत उपलब्धि के हित में अपनी कुशलताओं का प्रयोग करने हेतु तत्पर हैं। तथापि, जहाँ पर माता–पिता अपने बच्चों तक लाभ पहुँचा सकते हैं, उपलब्धि के लिए आरंभ–बिंदु असमान होता है क्योंकि, उदाहरण के लिए, कामगार वर्ग के बच्चे उन प्रतिकूल अवस्थाओं से शुरू करेंगे जो उन्हें अपने माता–पिता से विरासत में मिली हैं। अवसर की समानता हेतु समुचित अवस्था को किसी महत्त्वपूर्ण सहमति तक लाने के लिए, दशा संबंधी समानता की गारण्टी देना अनिवार्य है, यथा दौड़ में सभी प्रतिस्पर्धियों को उपयुक्त अड़चनों के साथ एक ही बिन्दु से प्रारम्भ करना चाहिए।

चौथे, समानता का सर्वाधिक मूलभूत उद्देश्य है, फल अथवा *परिणामों* की समानता। संक्षिप्त में, इसका अर्थ है कि निर्मित कानून व अन्य राजनीतिक साधनों के माध्यम से परिणामों की समानताएँ आरम्भ–बिन्दु अथवा नैसर्गिक योग्यता पर ध्यान दिए बिना प्राप्त की जाती हैं। परिणामों की समानता संबंधी कार्यक्रम एक निष्कर्ष के रूप में आरम्भ में असमानताओं को सामाजिक समानताओं में बदलने का प्रयास करता है। अलाभांवितों (यथा, अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, महिलाएँ, बच्चे, विकलांग आदि) के पक्ष में सकारात्मक विभेदीकरण संबंधी सामाजिक कार्यक्रमों का अभिप्राय परिणामों की समानता सुनिश्चित करने हेतु एक सार्थक अवसर–समानता लाने के लिए शर्तों की एक अर्थपूर्ण असमानता हेतु प्रतिकार करना ही है।

इस प्रकार, समानता के अभिप्राय को समझने के लिए, हमें समानता की विभिन्न धारणाएँ दिमाग़ में रखनी पड़ती हैं। ऐतिहासिक रूप से, जबकि उदारवादी लोकतांत्रिक परम्परा अवसर व दशाओं के विचार की पक्षधर है, परिणाम की समानता प्रतिस्पर्धा व पण्यक्षेत्र द्वारा पैदा की गईं असमानताओं के प्रतिकार पर अभिलक्षित समाजवादी नीतियों के घोषणापत्र का एक हिस्सा रही है।

5-4 lekurk d vk;ke

समानता एक बहु–आयामी संकल्पना है। समानता हेतु आवश्यकता सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महसूस की जाती है। ऐतिहासिक रूप से भी, समानता के विभिन्न आयामों हेतु माँग न तो कभी एक ही समय में, न ही एक–सी प्रचण्डता के साथ उठायी गई। जबकि उदारवाद ने समानता के कानूनी–राजनीतिक आयामों पर अधिक ज़ोर दिया, समाजवादियों ने सामाजिक–आर्थिक समानता को प्राथमिकता दी। समानता के विभिन्न आयाम हैं :

- कानूनी समानता
- राजनीतिक समानता
- आर्थिक समानता
- सामाजिक समानता

5-4-1 dkuuh lekurk

व्यापक उदारवाद, जब वह सामंती व धार्मिक विशेषाधिकारों से लड़ रहा था, ने दृढ़तापूर्वक कहा कि अवसरों के समान वितरण को जीवन, स्वतंत्रता व स्वामित्व के मौलिक अधिकारों का सिर्फ़ समान आबंटन चाहिए। यदि कानूनी विशेषाधिकारों का उन्मूलन कर दिया जाए और कानूनी अधिकारों की रक्षा की जाए, तो किसी के भी सुख–शांति मार्ग अनुसरण में कोई बाधा नहीं रहेगी। इसका तात्पर्य दो बातों से है : *कानून का शासन* और *कानून के सम्मुख समानता*। कानून के शासन का मतलब है कि कानून बल में सर्व–प्रधान है और कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना भी बड़ा व्यक्ति हो अथवा वह ऐसा सोचता हो, स्वयं को कानून से ऊपर घोषित नहीं कर सकता है क्योंकि ऐसा करना यादृच्छिक शासन के ही तुल्य होगा। कानून के सम्मुख समानता का अर्थ यह है कि कानून हरेक नागरिक को स्वतंत्रता की गारण्टी देता है। यह बात लोकप्रिय रूप से इस प्रकार स्पष्ट की जाती हैः कानून के सम्मुख स्वतंत्रता और कानून का समान संरक्षण।

i) dkuu d lEe[k lekurk 'आम कानून–कचहरियों की देखरेख में देश के रिवाजी कानून के प्रति सभी सामाजिक वर्गों का समान प्रसंग' में निहित है। इसका अर्थ है कि सभी समान व्यक्तियों के बीच कानून बराबर होना चाहिए और समानरूप से ही उसे लागू किया जाना चाहिए, तथा 'तादृश के साथ समान रूप से व्यवहार किया जाना चाहिए।' दूसरे शब्दों में, कानून को अमीर और ग़रीब, सामन्ती शासक अथवा खेतिहर, पूँजीपति अथवा कामगारों के बीच कोई भेद नहीं करना है। कानून की नज़र में सभी बराबर हैं। यह बात यह भी संकेत करती है कि कानून में अधिकारों व कर्त्तव्यों की समानता यानी, कानून के तहत सभी के जीवन व शरीरांग की समान रक्षा और उनके उल्लंघन पर सभी पर समान दण्डादि। तथापि, चूँकि कानून विशेष अधिकारों व कर्त्तव्यों वाले वर्गों को जन्म देता है, जैसे मकान–मालिक बनाम किरायेदार, पुलिस बनाम जनता, संसद–सदस्य बनाम न्यायाधीश आदि, ऐसी परिस्थितियों में, अधिकारों में अन्तर अपरिहार्य हैं। और अन्तिम पर अकिंचन् नहीं, कानून के सम्मुख समानता का अर्थ वास्तविक कानून–प्रबंधन में समानता भी है। इस तथ्य के बावजूद भी कि लोग कानून के समक्ष समान हो सकते हैं, निर्णायकगण भ्रष्ट अथवा पक्षपाती हो सकते हैं। कानून के सम्मुख समानता को यह

सुनिश्चित करना चाहिए कि न्यायाधीश राजनीतिक दबावों से मुक्त हों, भ्रष्टाचार, पूर्वाग्रह आदि से मुक्त हों। कानून–व्यवहार में असमानता बढ़ भी सकती है यदि ग़रीब आदमी को किसी कानूनी कार्रवाई की लागत से बचाया जाएगा यानी, यदि एक अमीर आदमी किसी समझौते को एक ग़रीब के मुकाबले कम अनुकूल शर्तों पर थोप सकता है, तो प्रतिपक्षी अपने पास प्रतिवेदन का कारण होने की धमकी देकर अदालत जा सकता है।

ii) dkuu dk leku lj{k.k % कानून के सम्मुख समानता का अर्थ पूर्ण समानता नहीं है। जबकि कानून लोगों के बीच कोई भेद नहीं करता, समान संरक्षण का अर्थ है कि तर्कसंगत परिस्थितियों के आधार पर, कुछ निश्चित विभेद किए जा सकते हैं। कानून, कुछ विशेष परिस्थितियों में, युक्तिसंगत भेदभाव कर सकता है। इसका अर्थ है 'समानों के लिए समान कानून और असमानों के लिए असमान कानून।' यह बात भारतीय संविधान के संदर्भ में बड़ी अच्छी तरह समझी जा सकती है, जहाँ कानून, जबकि जन्म, जाति, मत अथवा धर्म पर आधारित किसी भेद को नहीं मानता है, कुछ निश्चित युक्तिसंगत भेद अथवा स्वीकार करता है, जैसे महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण अथवा विशेष कतारें, रेल–यात्रा आदि में छात्रों को दी जाने वाली छूट। पिछड़ापन, लिंग, योग्यता, आदि पर आधारित इस प्रकार के भेद युक्तियुक्त भेद माने जाते हैं। ऐसे मामलों में, कानून समान की बजाय असमान विनियोग द्वारा लोगों की रक्षा करता है।

कानूनी समानता के विषय में बताते हुए, जे.आर. लूकास लिखते हैं कि कानून के सामने समानता का आवश्यक नहीं कि यही मतलब हो कि कूनन समान रूप से व्यवहार करेगा, बल्कि इसकी बजाय वह यह निश्चित करता है कि कानून हर व्यक्ति की पहुँच में होगा। दूसरे शब्दों में, कोई भी व्यक्ति इतना छोटा नहीं होगा कि वह कानून की शरण भी न ले सके तथा कोई भी व्यक्ति इतना बड़ा नहीं होगा कि वह कानून के प्रति ज़वाबदेह न हो। इसका अर्थ है कि कोई भी व्यक्ति न्यायालयों से मदद हेतु गुहार कर सकता है, हर व्यक्ति उसके आदेशों को मानने हेतु बाध्य है, और न्यायालय भी निर्णय निष्पक्ष रूप से लेंगे। कानून के समक्ष समानता का अर्थ है कानून की समान अधीनता और कानून का समान संरक्षण।

तथापि, कानूनी समानता न्याय प्राप्त करने के समान अवसरों के अभाव में अर्थहीन हो जाती है। उदारवादी समाजों में, लोगों को अपनी समानता की रक्षार्थ न्याय पाने हेतु समय व धन दोनों की आवश्यकता पड़ती है। सभी के पास समान अधिकार हो सकते हैं, परन्तु उन अधिकारों को दोषादि–मुक्त सिद्ध करने के लिए सभी के पास समान सामर्थ्य नहीं होती, क्योंकि दोष–प्रक्षालन में खर्चा आता है और कुछ लोग इन खर्चों को उठाने में दूसरों की अपेक्षा अधिक समर्थ होते हैं। इस प्रकार, न्यायालयों के यथार्थ व्यवहार और संचालन में, देश के कानून–विधान से भिन्न, असमानता अभी तक व्याप्त है। हालाँकि अपनी कार्यप्रणालियों में सुधारों के माध्यम से यह निरन्तर कम हो रही है।

5-4-2 jktuhfrd lekurk

जैसा कि लिप्सन लिखते हैं, सामान्यतया और प्रचलित रूप से, चन्द लोगों के लाभार्थ ही चन्द लोगों द्वारा बहुतों पर हमेशा से शासन किया जाता रहा है। मानवता एक सामान्य नियम के रूप में असमानताओं व विशेषाधिकारों की शासन–प्रणाली के अन्तर्गत ही जीवित रही है। राजनीतिक मामलों में असमानता का आधार रहा है – ज्ञान (प्लेटो), धर्म और भगवान् (राजतंत्र), जन्म (अभिजात–तंत्र), धन (धनिक–तंत्र), वर्ग (दक्षिण अफ्रीका), प्रजाति (हिटलर), संभ्रांत (पैरेटो, मोस्का) आदि। इन सबके

विरुद्ध, राजनीतिक समानता लोकतांत्रिक संस्थाओं तथा राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने के अधिकार से जुड़ी है। राजनीतिक समानता हेतु माँग 'एक–व्यक्ति–एक–वोट' में सारांशतः रूपायित है। यही राजनीतिक समानता का मूल सिद्धांत है, जिसे अब दुनियाभर के प्रायः सभी देशों में सम्पूर्ण समर्थन हासिल हो गया है। यह सिद्धांत वोट देने के अधिकार, चुनावों में खड़े होने के अधिकार, जाति, वर्ण, लिंग, धर्म, भाषा पर (किए जाने वाले) भेद के बिना सार्वजनिक पद रखने में व्यक्त किया जाता है। लास्की के अनुसार, राजनीतिक समानता का अर्थ है, वह प्राधिकार जो यह यत्न करता है कि सत्ता अवश्य ही लोकतांत्रिक शासन नियमों के अधीन हो। तथापि, हाल के वर्षों से, यह महसूस किया जा रहा है कि राजनीतिक समानता का सिद्धांत इतना सरल नहीं है जितना कि इसका उदारवादी अर्थ बतलाता है। यदि राजनीति शब्द का अर्थ है दूसरों को प्रभावित करने की वह पटुता जो कि कोई व्यक्ति अपनी इच्छा अथवा उस दल की इच्छा, जिससे वह संभवतः संबंधित है, के मुताबिक चीज़ों को नियंत्रित, संचालित व व्यवस्थित करने में प्रयोग करता है, स्पष्टतः हम नहीं कह सकते हैं कि लोग राजनीतिक रूप से समान हैं। आधुनिक युग में, सरकार की प्रकार्यिकता बहुत जटिल हो गई है और वास्तविक राजनीतिक सत्ता उस नौकरशाही पुलिस व सेना में निहित रहती है, जिस पर जनसाधारण का कोई वश नहीं चलता। वस्तुतः, राजनीतिक सत्ता व राजनीतिक समानता परस्पर भिन्न वर्ग हैं। आम आदमी पर अनेक दबाव होते हैं, साथ ही होता है घटक बाहुल्य है जिसमें शामिल हैं विभिन्न योग्यताएँ, स्वयं का हक कायम करने की योग्यता और सर्वोपरि कुसमंजित स्वामित्व व्यवस्था द्वारा थोपा गया विभेदन। तथापि, राजनीतिक समानता की उत्तमता यह मूल सत्य पहचानने में निहित है कि यदि कानून में मनुष्य समान हैं, तो शासनाधिकार के संबंध में भी उनके बीच समानता होनी चाहिए।

5-4-3 vkfFkd lekurk

बीसवीं शताब्दी में समानता के आर्थिक पहलू और उसे सुनिश्चित करने के साधनों हेतु एक गहराती चिंता देखी गई, या तो उदारवादी व्यवस्था के ढाँचे के भीतर ही अथवा एक समाजवादी समाज की स्थापना द्वारा। तीव्र औद्योगीकरण ने एक बढ़ती जागरूकता पैदा की कि अवसर की समानता कानून की उस समानता द्वारा नहीं प्राप्त की जा सकती है जो रोटी चुराने अथवा पुलों के नीचे सोने के लिए अमीर और ग़रीब दोनों को ही एक समान निषेध करती है। अवसर की समानता न सिर्फ़ पहले से ही कुछ अधिकारों के समान आबंटन को लेकर चलती है, बल्कि उसे वितरण के एक और नियम–प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है : कुछ मौलिक आवश्यकताओं की संतुष्टि की समानता। इसका अर्थ है आर्थिक रूप से अल्प–लाभांवितों हेतु विशेषाधिकार। जैसा कि टॉनी ने लिखा, 'अवसर की समानता महज कोई कानूनी समानता का मसला नहीं है। इसका साक्ष्य सिर्फ़ अयोग्यताओं के अभाव पर ही निर्भर नहीं करता, वरन् योग्यताओं की विद्यमानता पर भी करता है। यह वहाँ प्रचलित है जहाँ तक, और सिर्फ़ जहाँ तक, समुदाय का प्रत्येक सदस्य, उसका जन्म या व्यवसाय या सामाजिक ओहदा कुछ भी हो, वास्तव में, न कि महज दिखावे में, अपने गुण व बुद्धि–संबंधी नैसर्गिक प्रतिभाओं के पूरे–पूरे प्रयोग के समान अवसर रखता है'।

शुरुआती उदारवादीजन आर्थिक समानता से अर्थ लगाते थे – किसी के व्यापार अथवा व्यवसाय को चुनने की समानता जो उसकी जाति, धर्म–सिद्धांत अथवा आर्थिक पदस्थिति पर ध्यान नहीं देती। यह अनुबंध की स्वतंत्रता के रूप में भी लिया जाता था, अथवा इस रूप में कि जहाँ तक आनुबंधिक बाध्यताओं का संबंध है, हर व्यक्ति समान है। बहुधा, इसे धन–सम्पत्ति और आय के रूप में भी लिया गया। तथापि, इन सभी उपायों को अपर्याप्त समझा जाता था। आर्थिक समानता को स्पष्ट करते हुए

रूसो लिखते हैं, 'समानता से हमें यह अर्थ लेना चाहिए कि शक्ति और समृद्धि ही हर व्यक्ति के लिए नितान्त न अभिन्न हो, बल्कि यह कि कोई भी नागरिक इतना अमीर न हो कि दूसरे को खरीद ले और न ही कोई इतना ग़रीब कि वह स्वयं को बेचने पर मजबूर हो। आर्थिक समानता का संबंध वस्तुओं के आबंटन से है। ग़रीब आदमी को सामान्य आरम्भ–रेखा तक लाने के लिए, कानून अवश्य ही सामाजिक विधान तथा समाज–सेवाओं के माध्यम से उन मूल अलाभों की सम्पूर्ति करे, जैसे – न्यूनतम वेतन, कर छूट, बेरोज़गारी हितलाभ, मुफ़्त स्कूली पढ़ाई, छात्रवृत्ति आदि।

लास्की के अनुसार, आर्थिक समानता सर्वाधिक व्यापक तौर पर एक अनुपात–समस्या है। इसका अर्थ है कि ऐसी चीजें जिनके बिना जीवन अर्थहीन है, बिना कोटि अथवा प्रकार में भेद किए, सभी के लिए अवश्य ही प्राप्य हों। हर आदमी खाये–पिये अथवा आश्रय पाए। समानता में पर्याप्तता की गुंजाइश तक मौलिक आवश्यकताओं हेतु प्रतिक्रिया की पहचान शामिल है। अवसर–समानता हेतु एक पूर्वशर्त के रूप में बुनियादी ज़रूरतों की समान सन्तुष्टि को आर्थिक समानता की आवश्यकता अवश्य है, यानी जिन्सों के वितरण में अत्यधिक असमानताओं में कमी। आर्थिक समानता दो–तही होती है : (i) यह एक सामाजिक स्थिति–संबंधी मामला है और (ii) यह एक धन–सम्पत्ति एवं आय–संबंधी मामला है। सामाजिक स्थिति का मामला इस मुद्दे को उठाता है कि क्या राज्य को औद्योगिक उत्पादन को एक 'समानों की सहभागिता' जैसी किसी चीज़ में बदल डालने का प्रयास करना चाहिए और एक ऐसी व्यवस्था लानी चाहिए जिसके तहत निर्देश व प्रबंधकारी घटक एकसमान आधार पर खड़े हों। धन–सम्पत्ति व आय के संबंध में मुद्दा यह है कि उनके वितरण में असमानता निवारण के लिए राज्य को किन तरीकों को अपनाने का प्रयास करना चाहिए। उदारवादी राज्य मिश्रित अर्थव्यवस्था, विशेष कराधान, सामाजिक व्यय–संबंधी तरीकों से वेतन नियमन व वृद्धि व अन्य कल्याण कार्यों के माध्यम से धन–सम्पत्ति की व्यापक असमानताओं में सुधार करता रहा है। राज्य ग़रीबों के कल्याणार्थ अमीरों पर कर लगाता है। जबकि डैरेनड्रोफ़, रेमण्ड अरॉन, लिपसेट जैसे उदारवादी समाजशास्त्री को लगता है कि समाज के सभी स्तरों हेतु कल्याण–कार्यों को विस्तार देकर और उत्तरोत्तर कराधान के मार्फ़त आय व धन–सम्पत्ति के पुनर्वितरण के माध्यम से, राज्य आर्थिक वैषम्य को कम करने व सभी की मौलिक आवश्यकताओं की तुष्टि सुनिश्चित करने में राज्य सक्षम रहा है। गैल्ब्रेथ तो यह घोषित करने के कगार पर ही हैं कि आर्थिक समानता पाश्चात्य लोकतंत्रों में अब आदमी के दिमाग़ में एक मुद्दा बनना बंद हो चुका है।

तथापि, उदारवादी समाजवादी यह महसूस करते हैं कि इस सच्चाई के बावजूद कि राज्य कार्यव्यापार के परिणामस्वरूप सम्पत्ति का वृहत्तर प्रसार ही हुआ है, पूँजीगत संसाधनों का स्थायी स्वामित्व तथा अमीर व ग़रीब के बीच वैषम्य जारी है और अभी तक काफी ज़्यादा है। राज्य कार्यव्यापार 'अपने अधिक साम्यिक वितरण की एक व्यापक पद्धति ढूँढने संबंधी समस्या के सिर्फ़ हाशिये को छूता है। राज्य को अभी लाभ दूसरों में बाँटने की एक व्यापक पद्धति तलाश करने संबंधी समस्या का समाधान पाने का प्रयास करना है'।

5-4-4 lkekftd lekurk

सामाजिक समानता हर व्यक्ति के लिए उसके व्यक्तित्व विकास हेतु अवसर की समानता से संबंध रखती है। इसका अर्थ है जाति, मत, धर्म, भाषा, प्रजाति, लिंग, शिक्षा, आदि पर आधारित सभी प्रकार के भेदभावों का उन्मूलन। मुख्य प्रश्न जो आज सामने है, वो है राज्य व उसका कानून विभिन्न जातियों, वर्गों व प्रजातियों के प्रोत्साहन, महिलाओं के उद्धार जहाँ तक कि स्वामित्व में समानता व

मताधिकार का संबंध है, तथा शिक्षा संस्थानों में प्रवेश पाने संबंधी अधिकारों की समानता हेतु कैसे प्रयास करे। प्रजातियों व रंग की समानता इस बात से इंकार करती है, वह वर्ग जिसका पक्ष वह लेती है, किसी की भी तुलना में निकृष्ट नहीं है। निकृष्टता दो विचारों का तात्पर्य रखती है : पद्ध आलोचित वर्ग हेतु समान विचारों के सिद्धांत को बढ़ावा देने से इंकार, जैसे कि नीग्रो, दक्षिण अफ्रीका में अश्वेत, यहूदी आदि, और पपद्ध संदिग्ध जैविक साक्ष्य में माध्यम से निकृष्टता सिद्ध करना कि कुछ प्रजातियाँ दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ हैं।

लिंगों की समानता–संबंधी उदाहरण को इस प्रकार समझा जा सकता है : पद्ध कि पुरुषों व स्त्रियों के बीच शारीरिक व मनोवैज्ञानिक भेद के बावजूद, इस प्रकार का कोई साक्ष्य नहीं कि सामान्य तौर पर महिलाएँ समझ, व्यापार क्षमता, निर्णय प्रभाविता आदि में पुरुषों की तुलना में निकृष्ट होती हैं, और कि इस प्रकार की बनावटी निकृष्टताओं पर आधारित भेदभाव को ग़लत स्थान दिया गया है, तथा पपद्ध माने जाने वाले भेद मताधिकार, व्यवसाय प्रवेश, शैक्षिक अवसर, पारिश्रमिक स्तर आदि के संबंध में लिंगों के बीच भेदभाव का समर्थन नहीं करते। इस प्रकार, 'समान काम के लिए समान वेतन' का अर्थ है कि पुरुषों व महिलाओं को समान रूप से भुगतान किया जाना चाहिए, यदि वे पूर्णतया समान रूप से ही काम करते हैं; और परिवार के भीतर प्रकार्यों में स्वीकृत जैविक व मनोवैज्ञानिक भेद होते हैं। एक माँ से अपेक्षा होती है कि वह स्वयं को घर व बच्चों में खपाये, और एक पिता स्वयं को परिवार के लिए रोज़ी–रोटी कमाने में। परन्तु यह बात पति को एक स्वामी अथवा मालिक की स्थिति तक उठा देने को तर्कसंगत नहीं ठहराती, न ही परिवार की माँगों के प्रति नारी–व्यक्तित्व के सम्पूर्ण बलिदान को। महिला–उद्धार को स्वयं ही न सिर्फ़ कानून व अर्थव्यवस्थाओं में, बल्कि प्रचलित वैवाहिक संबंधों में परिवर्तनों में भी, व्यक्त होना पड़ता है। उदाहरण के लिए, अनेक पतिजन अब यह मानते हैं कि पहले की पीढ़ियों में परिवारों की माँओं द्वारा ढोया जाने वाला घरेलू बोझ लिंग–भेद द्वारा ध्वनित कार्य–भेद के समग्र अनुपात से अधिक था। गृह–कार्यों व शिशु–पालन में हाथ बँटाने की उनकी तत्परता समान–महत्त्व सिद्धांत–संबंधी व्यावहारिक विस्तार का एक संकेत है।

सामाजिक समानता सामाजिक गतिशीलता में मदद करने के एक समान आधार पर शैक्षणिक संस्थानों की स्वच्छंदता पर भी निर्भर करती है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ अत्यधिक असमानताएँ विद्यमान होती हैं। लगभग सभी उदारवादी देशों में शिक्षा बहुत अधिक सामाजिक वर्गों की ही तर्ज पर ही संगठित है और शैक्षणिक अवसर बहुत अधिक धन–सम्पत्ति व पद–स्थिति से जुड़े हैं। समाज की विभिन्न सामाजिक पर्तों, जैसे अभिजात वर्ग, मध्यवर्ग, निम्न मध्यवर्ग व ग़रीब जनसाधारण, की ख़िदमत में विभिन्न प्रकार के विद्यालय होते हैं। उन प्रतिष्ठित विद्यालयों में जहाँ समाज के धनवान वर्ग के बच्चे शिक्षा ग्रहण करते हैं, लड़कों को प्रेरित किया जाता है कि वे स्वयं को एक शासक वर्ग का ही समझें, चाहे वह राजनीति का क्षेत्र हो, प्रशासन का हो अथवा व्यापार का। दूसरी ओर, प्राथमिक विद्यालयी शिक्षा, जो अधिकतर सरकार द्वारा संचलित की जाती है, सदा ही और अभी तक एक सस्ती शिक्षा रही है। प्राथमिक पुस्तक समाज के एक निश्चित वर्ग के उन बच्चों की आवश्यकताओं व क्षमताओं के मुआफ़िक एक कम दाम की पुस्तक होती है, जिनको माना जाता है कि धन–सम्पन्न माता–पिताओं के बच्चों को दी जाने वाली जैसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। यहाँ तक कि प्राथमिक विद्यालय के लड़के को, आज की बदली परिस्थितियों में, यदि यह बताया भी नहीं जाता कि संसार को भगवान् ने अमीर, जिन्हें शासन करना है, तथा ग़रीब, जिनको शासित होना है, में बाँटा हुआ है, वे परिस्थितियाँ ही जिनमें उसे रखा जाता है, उसे पर्याप्त प्रमाण दे देती हैं। उसे एक ऐसे वातावरण में पढ़ाया जाता है जहाँ रुग्ण भवन, खेल के मैदानों की कमी, स्कूल पुस्तकालयों व प्रयोगात्मक कार्य हेतु प्रयोगशाला

सुविधाओं का अभाव, पुस्तकों की न्यूनता, अध्यापकों की अनुपलब्धता, कोष की अपूर्णता आदि की दृष्टिगोचर होते हैं। ग़रीब जनसाधारण के बच्चों हेतु अवसरों का रोटी की भाँति नियतांश–वितरण किया जाता है।

5-5 lekurk dk Lor=rk o U;k; ls lac/k

समानता व उदारता के बीच संबंध उदारवाद के दिलचस्प विवादों में से एक है। विवाद की जड़ है : क्या स्वतंत्रता व समानता एक–दूसरे की विरोधी हैं अथवा वे एक–दूसरे की पूरक–? आधुनिक संविधानों में, हम मौलिक अधिकारों की सूची में स्वतंत्रता व समानता, दोनों का एक प्रायिक साहचर्य पाते हैं। परन्तु वे सदा ही एक–सी नहीं रही हैं। इंग्लिश उदारवादी परम्परा स्वतंत्रता पर अधिक ज़ोर देती प्रतीत हुई जबकि फ्रांसीसी परम्परा ने सदा समानता की सिद्धांत–संबंधी मान्यता को सुनिश्चित करने का प्रयास किया था। ऐतिहासिक रूप से कहा जाए तो आरंभिक नकारात्मक उदारवाद समानता की बजाय स्वतंत्रता को प्राथमिकता देता था। वह राज्य के मुख्य कार्य के रूप में 'प्रतिबंधों के अभाव' के अर्थ में स्वतंत्रता की रक्षा की बात करता था और 'कानून के सामने समानता' से परे समानता में किसी भी छूट को राज्य के समुचित कार्य–क्षेत्र से बाहर माना जाता था। बीसवीं शताब्दी में विकसित हुआ सकारात्मक उदारवाद विपरीत दृष्टिकोण अपनाता है। वह समानता को स्वतंत्रता हेतु एक उत्तम व आधारभूत विषय–वस्तु मानता है। वह स्वतंत्रता व समानता दोनों की प्राप्ति को एक–दूसरे की पूरक मानता है। चलिए, इन तर्कों पर विस्तार से विचार करते हैं।

5-5-1 lekurk o Lor=rk ijLij fojks/kh :i esa

यह कि स्वतंत्रता व समानता एक–दूसरे की विरोधी हैं, आरंभिक उदारवाद की एक महत्त्वपूर्ण विचारगति थी। व्यापक उदारवाद ने स्वतंत्रता को इतनी तरज़ीह दी कि समानता उसकी दास बन गई। उसका विश्वास था कि स्वतंत्रता नैसर्गिक है और समानता भी ऐसी ही है। इसलिए स्वभावतः स्वतंत्रता व समानता एक–दूसरे की विरोधी हैं।

लॉक, एडम स्मिथ, बैन्थम, जेम्स मिल तथा तॉकविल जैसे शुरुआती विचारक यह महसूस करते थे कि व्यक्ति की स्वतंत्रता पर न्यूनतम प्रतिबंध होने चाहिए। उदाहरण के लिए, लॉक ने समानता को तीन नैसर्गिक अधिकारों की सूची में नहीं रखा। इसी प्रकार लॉर्ड एक्टन तथा एलैक्सिस द तॉकविल जैसे व्यक्तियों ने इस बात पर ज़ोर दिया कि समानता व स्वतंत्रता नीतिशास्त्र–विरुद्ध हैं। उनका तर्क था कि समानता हेतु इच्छा ने स्वतंत्रता रखने की संभावना को समाप्त कर दिया है।

इस युग में उदारवाद मुक्त बाज़ार तथा अहंभावी बुद्धिमान व्यक्तियों के बीच खुली होड़ की संकल्पना पर आधारित था और उसका विश्वास था कि आर्थिक प्रतिस्पर्धा, यद्यपि असमान, का परिणाम उपकारी और प्रगतिशील होगा। असमानता का यह वैधीकरण व्यक्तिवाद के सिद्धांत पर बहुत ज़ोर देता था और उसके प्रति वचनबद्ध था। राजनीतिक स्तर पर वह दावा करता था कि स्वतंत्रता व समानता के बीच एक आवश्यक विरोध है। ठीक जैसे स्वतंत्रता व्यक्ति से जुड़ी है, समानता, सामाजिक हस्तक्षेप से जुड़ी है। इस प्रकार, असमानता दूर करने के किसी भी प्रयास में परिस्थितियाँ समान करने व विद्यमान विशेषाधिकारों को समाप्त करने हेतु सामाजिक व राजनीतिक हस्तक्षेप निहित होता है। तथापि, इस हस्तक्षेप को व्यक्ति व स्वतंत्रता–संबंधी उसके निजी व्यवहार में ज़रूर दखलंदाज़ी करनी चाहिए।

शुरुआती उदारवादियों का विश्वास था कि एक असमान समाज में कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से धन–सम्पत्ति व विशेषाधिकार नहीं छोड़ता और परिणामस्वरूप, सामाजिक साम्यीकरण के कार्यक्रमों को व्यक्ति के लोकतांत्रिक अधिकारों के साथ ज़रूर हस्तक्षेप करना चाहिए। केवल व्यक्ति ही अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं व रुचियों को जानने व अभिव्यक्त करने में पूर्णतः सक्षम है; राज्य अथवा किसी अन्य निकाय के लिए यह अनुचित होगा कि वह नागरिकों के जीवन व स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करे। शुरुआती उदारवाद में स्वतंत्रता, पसंद और धन निकटता से जुड़े थे। अमीरों की धन–सम्पत्ति में उनकी स्वतंत्रता भी निहित थी और उनकी धन–सम्पत्ति को उनसे बलपूर्वक छीने जाने का मतलब था उनकी आज़ादी का दोहरा अतिक्रमण।

बीसवीं शताब्दी में इस सिद्धांत का बेजहॉट, मे, स्टिफ़न, हयेक, मिल्टॅन फ्रीडमैन, मॉस्का, पैरेटो आदि द्वारा समर्थन किया गया। उनका मानना है कि वित्तीय व सामाजिक असमानताओं के चलते, परिस्थितियों की सामाजिक समानता अथवा परिणाम की समानता सुनिश्चित करने हेतु किसी भी राजनीतिक कार्यक्रम को एक सर्वसत्तावादी और सत्तावादी राज्य–व्यवस्था में परिणत होते राज्य द्वारा व्यापक सामाजिक व राजनीतिक नियमन की आवश्यकता होगी। 'समानता के लक्ष्य' ने व्यवहारतः असमानता व प्रजापीड़न की ओर प्रवृत्त किया है। यह महज इत्तेफ़ाक नहीं है। यह उन परिस्थितियों का सीधा परिणाम है जो समानता की नितांत संकल्पना में निहित हैं। समतावाद राज्य की अवपीड़क शक्ति विषयक अपने लक्ष्य प्राप्ति पर भरोसा करता है, जैसा कि वे उस मानव उपादान के स्वभाव के साथ करने को बाध्य होते हैं जिसके साथ वे क्रियाव्यापार करते हैं। एक ऐसा समाज जिसमें मानव अस्तित्व के प्रति मौलिक विकल्प अवपीड़न द्वारा तय किए जाते हैं, वह स्वतंत्र समाज नहीं होता है। निर्विरोध रूप से यह बात सामने आती है कि समतावादियों को स्वतंत्रता व समानता में से एक अवश्य चुनना चाहिए'।

इसी प्रकार, ह्येक के अनुसार, 'तथ्य से कि लोग बहुत भिन्न होते हैं, यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि हम उनसे समान रूप से व्यवहार करते हैं, परिणाम उनकी वास्तविक स्थिति में असमानता ही होगा और कि उन्हें एक समान स्थिति पर रखने का तरीका उनके साथ भिन्न रूप से व्यवहार ही होगा। कानून के समक्ष समानता, जिसकी स्वतंत्रता को अपेक्षा होती है, भौतिक असमानता की ओर प्रवृत्त करती है। अपनी परिस्थितियों में लोगों को ज़्यादा एकसा बनाने की इच्छा एक स्वतंत्र समाज में स्वीकार नहीं की जा सकती, साथ ही, यह और भी ज़्यादा तथा भेदभावपूर्ण अवपीड़न हेतु औचित्य प्रतिपादन होगा'।

दूसरे शब्दों में, महत्त्वपूर्ण समानता का मूल्य वह राजनीतिक निरंकुशता होगा जो वैयक्तिक प्रतिभा व उपलब्धि का कम महत्त्व मानेगा। समानता के नाम पर राज्य अनावश्यक रूप से अपनी शक्तियाँ बढ़ा लेता है और लोगों के अधिकारों व स्वतंत्रताओं पर रोक लगाता है।

व्यक्तियों की परिवर्तनकारी समानता और परिणाम को नियमन की सर्वसत्तात्मक व्यवस्था की अपेक्षा होती है। तथापि, यह भी समानता की कोई गारण्टी नहीं है। व्यवहारतः, तथाकथित सर्वसत्ताक राज्य–व्यवस्थाओं ने कदापि सम्पूर्ण नियंत्रण हासिल नहीं किया। चूँकि मनुष्य पूर्ण अनुशासन का अनिच्छुक होता है, ऐसी असमानताओं को मिटाने के सभी सामाजिक व राजनीतिक प्रयासों के बावजूद परिणाम की असमानता का कुछ अंश अपरिहार्य लगता है। इस प्रकार, विचारधारा पर ध्यान न देते हुए, समानता की प्राप्ति एक समस्या है।

लोकतंत्र के अभिजात–सिद्धांत समर्थक यह मानते हैं कि लोग राजनीतिक रूप से समान हैं और लोकतंत्र व स्वतंत्रता को एकतंत्र से बचाने के लिए, यह अनिवार्य है कि केवल अभिजात वर्गों को ही (यथा, वे व्यक्ति व समूह जो श्रेष्ठ और इस प्रकार असमान हैं) राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेना चाहिए। दूसरे शब्दों में, राजनीतिक स्वतंत्रता कायम रखने के लिए, असमानता, न कि समानता स्वतंत्रता का आधार है।

संक्षिप्ततः, स्वतंत्रता व समानता असंगत हैं, उदारवाद का अर्थ है स्वतंत्रता, समानता सिर्फ़ कानून के सामने वा छनीय है, राजनीतिक समानता मताधिकार व आभिजात्यों के चुनाव तक ही सीमित होनी चाहिए; सामाजिक व आर्थिक समानता जहाँ तक कि वह राज्य की शक्तियों में इज़ाफ़ा करती है, स्वतंत्रता पर एक ख़तरा है।

5-5-2 lekurk o Lor=rk ,d nlj dh ijd g

इस आरंभिक उदारवादी तर्क ने कि समानता व स्वतंत्रता परस्पर ग़ैर–मिलनसार है, व्यक्तिगत हितों व सामाजिक आवश्यकताओं के बीच एक अपरिहार्य विवाद का रूप ले लिया। परन्तु व्यक्ति बनाम समाज का यह द्वैदाश्य ऐतिहासिक रूप से असफल सिद्ध हुआ। उन्नीसवीं शती में समाजवादियों व सकारात्मक उदारवादियों द्वारा उठाई गई आर्थिक एवं सामाजिक समानता–संबंधी माँग ने समानता को स्वतंत्रता की प्रमुख वाँछनीयता बना दिया। सकारात्मक उदारवादियों का दावा था कि स्वतंत्रता व समानता एक–दूसरे की पूरक हैं तथा राज्य को विधान व नियमन के माध्यम से सामाजिक व आर्थिक असंतुलनों को ठीक करने का काम सौंपा गया है। इस दृष्टिकोण के समर्थक हैं – रूसो, मैटलैण्ड, टी.एच. ग्रीन, हॉबहाउस, लिंडसे, आर.एच. टॉनी, बार्कर, लास्की, मैक्फर्सन, आदि।

सकारात्मक उदारवाद ने व्यक्ति को एक ऐसे सामाजिक प्राणी के रूप में देखा जिसकी इच्छाएँ एक सामाजिक परिवेश के भीतर किसी सहकारी सामाजिक संबंध के प्रसंग में पूरी नहीं की जा सकती थीं। उसने स्वतंत्रता को 'अवसर समानता' के रूप में प्रस्तुत किया जिसका अर्थ है कि अवसर हर किसी को 'उसके व्यक्तित्व के निहितार्थ' का अनुभव कराने के लिए ही दिए जाने चाहिए। ऐसे अवसर को प्रदान करने के लिए, मंत्रणात्मक सामाजिक निग्रहों को वैयक्तिक स्वतंत्रता से ऊपर रखे जाने की आवश्यकता है। जैसा कि टॉनी ने लिखा है, ''निर्बल की स्वतंत्रता बलवान के निग्रह पर निर्भर करती है और ग़रीब की स्वतंत्रता बलवान के निग्रह पर। हर व्यक्ति को यह स्वतंत्रता होनी चाहिए और दूसरों पर प्रयोग करने के लिए कदापि नहीं, जैसा कि वह कर सकता है ताकि वे ऐसा न करें'। स्वतंत्रता की माँग है कि किसी को भी दूसरों की दया पर न रखा जाए। सभी के लिए अवसर सुनिश्चित करके ताकि वे यथासंभव सर्वोत्तम बनें, स्वतंत्रता समानता को वास्तविक बना देती है। स्वतंत्रता के बिना समानता उबाऊ एकरूपता में व्यपगत हो जाती है।

आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बिना स्वतंत्रता को अनुभव नहीं किया जा सकता। एक आर्थिक असमानों के समाज में सकल असमानताएँ स्वतंत्रता को कुछेक का ही विशेषाधिकार बना देती हैं। जैसा कि लास्की लिखते हैं, उदारता में रुचि तब पैदा होती है जब लोग मात्र अस्तित्व की समस्या से अभिभूत होना बंद कर देते हैं; ऐसा तब होता है जब उनके पास अवकाश का अवसर, आर्थिक क्षमता व विचारार्थ अवकाश हो, ये स्वतंत्र व्यक्ति की आवश्यक शर्तें हैं। समानता, जो धन–सम्पत्ति व सत्ता की सकल असमानताओं को समाप्त करने पर अभिलक्षित है, स्वतंत्रता का सच्चा आधार है। जब कभी असमानता होती है, स्वतंत्रता की अपेक्षा की जाती है। टॉनी का उद्धरण दोबारा लिए जाने पर,

'स्वतंत्रता के प्रति शत्रुवत् होने से दूर, समानता का एक बड़ा कदम इसके लिए अनिवार्य है। एक समाज, जो सकल असमानताओं की अनुमति देता है, राजनीतिक अथवा नागरिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित नहीं कर सकता। जहाँ कहीं भी अमीर और ग़रीब, शिक्षित और अशिक्षित होते हैं, हम मालिक और नौकर पाते हैं।' धन–सम्पत्ति की असमानता अमीर व ग़रीब के बीच समाज विभाजन में परिणत होती है, जहाँ अमीर अपनी धन–सम्पत्ति का प्रयोग सत्ता कब्ज़ाने और उसका अपने निहित स्वार्थों हेतु प्रयोग करने के लिए करते हैं। ठीक इसी प्रकार, यदि कहीं कोई सामाजिक असमानता होती है, तो लोग स्वतंत्रता का उपभोग नहीं कर पाते हैं। उदाहरण के लिए, अछूत, अनुसूचित जातियाँ व जनजातियाँ जो सामाजिक व आर्थिक, दोनों रूप से असमान हैं, स्वतंत्रता नहीं भोग सकती हैं। इसी प्रकार, न्याय में समानता नागरिक स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु एक आवश्यक शर्त है, परन्तु कुशल वकील करने में ग़रीब की असमर्थता न्याय प्राप्त करने में एक घातक बाधा बन जाती है। इस प्रकार, पोलार्ड लिखते हैं, 'स्वतंत्रता का सिर्फ़ एक उपाय है और वह समानता में निहित है। समानता के बिना स्वतंत्रता चंद लोगों के एक लाइसेन्स में निकृष्ट हो सकती है।'

सकारात्मक उदारवादी इस विचार से सहमत नहीं थे कि आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों में राज्य नियमन सत्तावाद की ओर प्रवृत्त करेगा। दूसरी ओर, जैसा कि हॉबहाउस ने लिखा है, राज्य अनुभव की सुव्यक्त शिक्षाओं द्वारा प्रेरित है कि समानता के बिना स्वतंत्रता 'शानदार विचार और घिनावने परिणामों' का नाम है। सही रूप से समझे जाने पर, कल्याणकारी विधान स्वतंत्रता व समानता के दो भिन्न आदर्शों के उल्लंघन के रूप में नहीं, बल्कि उनके पालन के लिए एक अनिवार्य साधन के रूप में नज़र आता है। बेरोज़गारी, स्वास्थ्य, बीमा, वृद्धावस्था पेंशन, मुफ़्त शिक्षा, आम सुख–सुविधाओं में वृद्धि आदि के क्षेत्र में सामाजिक विधान समाज में असमानताएँ कम करने में काफ़ी मददगार सिद्ध हुए हैं। इसके बावजूद, वृहत्तर साम्यकरण की इस दिशा में सुधार की सीमाएँ छुए जाना अभी बाकी है। असमानता व स्वतंत्रता दोनों परस्पर पूरक हैं और एक–दूसरे के बिना अधूरी हैं। दोनों की एक ही मंज़िल है; विशिष्ट व्यक्तित्व को प्रोत्साहन तथा उसके व्यक्तित्व का ऐच्छिक विकास। इस संदर्भ में, स्वतंत्रता व समानता दोनों एक–दूसरे के पूरक व अनुपूरक हैं। स्वतंत्रता के बिना समानता नहीं और समानता के बिना स्वतंत्रता का कोई अस्तित्व नहीं। दोनों को ही सामंजस्य स्थापित करना पड़ता है। जैसा कि डीन लिखते हैं, 'स्वतंत्रता व समानता में विवाद नहीं है अथवा वे अलग नहीं हैं, परन्तु एक ही आदर्श के भिन्न पहलू हैं ... वस्तुतः चूँकि वे अभिन्न हैं, कानून–संबंधी अथवा उस सीमा तक जहाँ तक कि वे संबंधित हैं अथवा हो सकते हैं, कोई समस्या हो ही नहीं सकती : यह निश्चित रूप से निकटतम है; यदि राजनीति–दर्शन की एक शाश्वत समस्या हेतु सदा–विचारित कोई भी सर्वाधिक संतोषजनक हल न हो।' इसी प्रकार, गैन्स लिखते हैं, 'स्वतंत्रता व समानता के बीच कोई अन्तर्निहित विवाद नहीं है। समाज, जिसका हम निर्माण करें, पर्याप्त समानता प्रदान करे ताकि हर व्यक्ति को दूसरे को अनुचित असमानता का दण्ड न देते हुए यथासंभव अपने निजी जीवन को नियंत्रित करने की स्वतंत्रता मिल सके।'

तथापि, स्वतंत्रता व समानता के बीच मेल–मिलाप के बावजूद, सकारात्मक उदारवाद भी समानता की तुलना में स्वतंत्रता को महत्त्व देता है। उदाहरण के लिए, बार्कर लिखते हैं कि समानता के नाम पर कोई भी दावा किया जाए, इसको अलग रखकर नहीं देखा जा सकता, क्योंकि यह सिद्धांत स्वतंत्रता व बन्धुत्व के सिद्धांतों के साथ ही चलता है। परन्तु अब तक इस विचार हेतु कारण विद्यमान हैं कि स्वतंत्रता का वज़न समानता से कहीं अधिक है। यह इसलिए बड़ी है, क्योंकि यह व्यक्तित्व के सर्वोच्च मूल्य से अधिक गहरे जुड़ी है, बनिस्पत उसकी क्षमताओं संबंधी ऐच्छिक विकास के। यह इसलिए भी बड़ी है क्योंकि स्वतंत्रता का उद्देश्य मनुष्य किसी ऐसी चीज़ में बाँध देता है जो हर किसी और सभी

के पास हो सकती है, जबकि समानता का उद्देश्य, अनन्य रूप से थोपा गया, उन्हें द्वेषोत्पादक मतभेदों के संभावित रूपों की ईर्ष्याओं में धकेल सकता है और एकता की बजाय विभाजन पैदा कर सकता है।' समानता, यदि समरूपता के बिंदु तक थोपी जाए, अपने ही उद्देश्य में विफल रहेगी, यथा 'मुद्दा तो हावी हो जाएगा और बयान बेतरतीब'।

5-5-3 lekurk vkj U;k;

स्वतंत्रता की भाँति, समानता व न्याय के बीच संबंध भी एक, सामाजिक विवादास्पद संबंध है। जैसा कि हमने ऊपर चर्चा की, जो हम समाज में देखते हैं वे आयु, लिंग, योग्यता, शिक्षा स्थिति, धन–सम्पत्ति, अवसर आदि पर आधारित अनेक असमानताएँ हैं। धन–सम्पत्ति व सामाजिक स्थिति–संबंधी असमानताएँ अधिकार की असमानताओं तथा चंद लोगों की इच्छा पर अनेक लोगों की निर्भरता व अधीनता की ओर प्रवृत्त करती है। ऐतिहासिक रूप से इस प्रकार की असमानताएँ न सिर्फ़ औचित्य–प्रतिपादित की गईं, बल्कि कायम भी रखी गईं। यूनानी समाज जन्म, सामाजिक स्थिति व जाति पर आधारित था। पूर्व उदारवाद ने कानूनी व राजनीतिक समानता के उद्देश्य की हिमायत करते हुए अनुबंध की स्वतंत्रता, मुक्त प्रतिस्पर्धा व निजी स्वामित्व से उपजी आर्थिक व सामाजिक असमानताओं का बखेड़ा नहीं पाला।

तथापि, सामाजिक–आर्थिक समानता आने के कारण साथ ही, विद्यमान असमानताओं के खिलाफ़ संघर्ष न्याय का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व बन गया। आज, समानता का किसी न किसी रूप में हरेक न्याय–सिद्धांत द्वारा आह्वान किया जाता है। न्याय की माँग है कि राजनीतिक अवसर की समानता, बर्ताव की समानता, वस्तुओं व सेवाओं के एकसमान वितरण तथा एक–आदमी एक–वोट आदि को उत्पन्न किए जाने के लिए ही की जानी चाहिए। पुनः, सिर्फ़ कानून के सामने समानता–संबंधी सिद्धांत लागू करके ही तथा कानून के समान संरक्षण द्वारा ही, हम निश्चिंत हो सकते हैं कि हमारे मामले में भी दूसरों की भाँति ही सलूक किया जाएगा। समानता इस प्रकार न्याय–संबंधी सिद्धांत के प्रति केन्द्रिक बन जाती है।

समानता व न्याय के बीच संबंध विषयक कोई भी चर्चा तब तक पूरी नहीं हो सकती जब तक कि जॉन रॉल्स का नाम न लिया जाए। रॉल्स ने न्याय–संबंधी एक सामाजिक सिद्धांत की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो अधिकारों व स्वतंत्रताओं संबंधी उदारवादी सिद्धांतों का सामंजस्य आर्थिक व सामाजिक समानता संबंधी सामाजिक समतावादी संकल्पना के साथ स्थापित करती है। उनके अनुसार, एक न्यायोचित समाज में समान आधारभूत स्वतंत्रताओं का अधिसीमांकन किया जाता है जहाँ एक व्यक्ति की स्वतंत्रता दूसरों की स्वतंत्रता के आड़े नहीं आती। साथ ही, वह उन प्रस्तावों के एक सेट का ख़ाका खींचते हैं, जो सामाजिक व आर्थिक असमानताओं के लिहाज़ से एक न्यायभाव उत्पन्न करते हैं। ये असमानताएँ, उनके अनुसार, इस प्रकार सुव्यवस्थित की जाएँ ताकि वे समाज में न्यूनतम लाभांवितों के अधिकतम लाभार्थ योगदान करें, और सरकारी नौकरियाँ व पद अवसर–समानता संबंधी शर्तों के तहत सभी के लिए खुले हों। न्याय–संबंधी उनकी आम धारणा यह है कि सभी अनिवार्य सामाजिक वस्तुएँ सभी के बीच समान रूप से बाँटी जाएँ, जब तक कि इन वस्तुओं का कोई भी असमान वितरण समाज के न्यूनतम समर्थित सदस्यों के लाभार्थ न हो। सरल शब्दों में, इसका अर्थ है कि आय–माध्यिका से ऊपर असमानता न्याय की दृष्टि से केवल तभी सामाजिक रूप से वांछित है, जब वह उन असमानताओं को कम करने में मदद करे जो इस माध्यिका से पहले विद्यमान हैं। समानता वांछित है, क्योंकि समानता पर आधारित न्याय–सिद्धांत समाज के सभी

सदस्यों के लिए एक वर्धमान लाभ प्रस्तुत करते हैं, खासकर न्यूनतम समर्थितों के लिए। परन्तु यह ग़ौरतलब है कि रॉल्स उस मामले में जिसकी उनसे अपेक्षा की जाती है, असमानताओं को पूरी तरह से नियम–विरुद्ध कहकर घोषित नहीं करते। उदाहरण के लिए, प्रोत्साहन रूप में, न्यूनतम लाभांवितों के वितरणार्थ एक बड़ा माल असबाब तैयार करना।

समानता व न्याय के बीच संबंध को एक अधिक ठोस और बुनियादी स्तर पर भी समझा जा सकता है; यथा, समानता का विचार समान वितरण के अर्थ में नहीं, बल्कि 'लोगों से समानों के रूप में बर्ताव किए जाने' के रूप में। न्याय की माँग है कि कम से कम सैद्धान्तिक स्तर पर, सरकार अपने नागरिकों के साथ समान आधार पर व्यवहार करे। हर नागरिक समान महत्त्व और सम्मान का हक़दार है। किमलिका के अनुसार, समानता का यह अधिक आधारभूत विचार नोज़िक के इच्छास्वातंत्र्यवाद के साथ–साथ मार्क्स के साम्यवाद में भी पाया जाता है। जबकि इच्छास्वातंत्र्यवाद का मानना है कि समानता का अर्थ है, किसी के श्रम व स्वामित्व पर समान अधिकार, मार्क्सवादी इसे आय व धन–सम्पत्ति की समानता के रूप में लेते हैं। कोई भी सिद्धांत जो यह दावा करता हो कि कुछ लोग सरकार से समान सम्मान पाने के हक़दार नहीं है, अथवा यदि यह दावा किया जाता हो कि कुछ लोग–विशेष का दूसरों के बराबर महत्त्व नहीं है, तब इस आधुनिक जगत् में अधिकांश लोग उस सिद्धांत को तत्काल निरस्त कर देंगे। इस संदर्भ में, ड्वोर्किन यहाँ तक कहते हैं कि हरेक युक्तियुक्त राजनीतिक सिद्धांत का एक ही अन्तिम मूल्य होता है, जो कि समानता है और यह कि 'हर व्यक्ति का समान रूप से महत्त्व है' ही 'न्याय–संबंधी सभी समकालीन सिद्धांतों का मर्म' है।

5-6 lekurk dh vkj

इस बात में कोई संदेह नहीं कि सभी समाज असमान हैं। पूँजीवाद के उदय ने जन्म व विशेषाधिकारों पर आधारित असमानताओं के एक सेट के स्थान पर निजी स्वामित्व पर आधारित असमानताओं के दूसरे सेट को रख दिया; हालाँकि ऐसे अनेक ऐतिहासिक परिवर्तन हुए जिन्होंने समानता व साम्यवाद की दिशा में रुझानों को प्रोत्साहित किया। असमानता दूर करने के सकारात्मक प्रयासों को प्रायः व्यक्तिगत स्वतंत्रता व सामाजिक समानता के बीच विरोधाभासी संबंध द्वारा गुप्त रूप से नुकसान पहुँचाया जाता है। परन्तु यहाँ महत्त्वपूर्ण बात है, *अवसर* की समानता तथा *दशाओं* की समानता व *परिणामों* की समानता, जैसे समानता के अन्य रूपों के बीच भेद करना। जबकि अधिकतर लोकतांत्रिक समाज अवसर–संबंधी समानता और काफ़ी हद तक दशाओं–संबंधी समानता प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें अभी भी परिणामों की समानता लाने के लिए लम्बा सफ़र तय करना है। नागरिकता अधिकारों ने, जो पहले यूरोप में विकसित हुए और फिर विश्व के अन्य भागों में फैले, एक अवसर, योग्यता व प्रतिस्पर्धा की समानता पर आधारित समाज को जन्म देने में मदद की। कानूनी नागरिकता यादृच्छिक, कानूनी बाधाओं से व्यक्ति को मुक्त करने से जुड़ी थी और उसने शैक्षिक योग्यताओं के आधार पर व्यवसायों व जन–प्रशासन के दरवाज़े खोल दिए। इसी प्रकार, राजनीतिक नागरिकता अधिकारों ने लोगों को सरकार के मामलों में भाग लेने का अवसर प्रदान किया। सामाजिक नागरिकता ने विधान के माध्यम से पूँजीवाद की बुराइयाँ दूर करने का प्रयास किया। बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य व सामाजिक सुरक्षा हेतु दशा–संबंधी समानता लाने के लिए सार्वभौम प्रावधान का क्रमिक विकास एक शालीन प्रयास था। बीसवीं शती में कल्याणकारी राज्य का विस्तार सामाजिक विधान का विस्तारण था। न्यूनतम वेतन, कार्य के घण्टे, बेरोज़गारी भत्ता, कार्य–दशाएँ, व्यावसायिक सुरक्षा आदि विषयक विधान

ने श्रम–बाज़ार में एक जिन्स मात्र के रूप में कर्मचारियों को कम असुरक्षित बना दिया। साथ ही, हम यह नहीं भूल सकते कि ये परिवर्तन निजी धन–सम्पत्ति स्वीकरण के लिहाज से पूँजीवाद के आर्थिक आधार को नहीं बदलते। ब्रायन टर्नर ने इसे एक समास–चिह्न युक्त व्यवस्था कहा है, क्योंकि यह वर्ग, सामाजिक स्थिति व सत्ता की भाषा में साम्यवादी नागरिक अधिकारों के एक प्रगतिशील विस्तार को असमानताओं की निरन्तरता से जोड़ता है।

नागरिकता अधिकारों से परे, गैलनर के अनुसार, आधुनिक औद्योगिक समाजों में अनेक ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रक्रियाएँ हैं जो एक साम्यवादी आदर्श स्थापित करना चाहती हैं, अंशतः पदानुक्रमित सामाजिक प्राध ाारों के पतन और ऐसी संस्कृतियों को कमज़ोर करने के परिणामस्वरूप, जिन्होंने पारम्परिक रूप से समानता को विधिकृत किया। उदाहरण के लिए, आधुनिक औद्योगिक समाजों का लक्षण होता है सामाजिक गतिशीलता का एक उच्च मापदण्ड, जो पदस्थिति के पारम्परिक रूपों के लागू किए जाने को मुश्किल बना देता है। गाँवों व कस्बों से शहरों की ओर युवाओं का झुकाव पैतृक प्राधिकार के पतन से जुड़ा था। इसी प्रकार, आधुनिक पूँजीवाद के अनेक अभिलक्षणों, खासकर कार्यबल में महिलाओं के आवेष्टन, ने कुटुम्ब में पितृसत्तात्मक प्राधिकार को कमज़ोर किया है। एकाकी परिवार के उदय ने समाज में महिलाओं की बदलती सामाजिक स्थिति में योगदान दिया है। साथ ही, जनसंचार माध्यमों के विकास तथा आधुनिक उपभोक्तावाद के उदय ने एक कार्य से फुरसत प्राप्त समाज को जन्म दिया है, जहाँ रुझानों के परम्परागत प्रतिमानों व उनसे जुड़े सांस्कृतिक असमानताओं के रूपों का ह्रास हुआ है। नई जिन्सों के उपभोगार्थ कामगार वर्ग की सक्षमता भाटक–क्रय, रेहनों व अन्य ऋण–सुविधाओं की मार्फ़त बड़ी तेजी से बढ़ी है। पुनः, रेडियो व टी.वी. ने सभी सामाजिक वर्गों हेतु एक समरूप संस्कृति के विकास में योगदान दिया है। आधुनिक साम्यवाद के पास जन–परिवहन के सामयिक साधनों की भी बहुतायत है। व्यापक तल–परिवहन और रेलमार्गों ने अचलता, प्रांतवाद व परम्परागत सामाजिक वर्गों के पार्थक्य को दूर करने में मदद की है।

निष्कर्ष में, हम कह सकते हैं कि असमानताओं के इस संसार में, ऐसी प्रवृत्तियाँ हैं जो मानव समाजों में समानताओं को बढ़ावा देती हैं। प्रथमतः एक न्याय–भाव है जो सभी सामाजिक संबंधों का एक आवश्यक अभिलक्षण प्रतीत होता है। असमानता रक्षात्मक विषयक है। दूसरे, लोकतांत्रिक समाजों की राजनीति एक अवपीड़न नियंत्रण नहीं, बल्कि संस्थाओं का एक सेट है जो लोगों को इच्छित लक्ष्यप्राप्ति हेतु समर्थ बनाता है। तीसरे, कामगार वर्ग व नारी–अधिकारी आन्दोलनों जैसे सामाजिक समूह व आन्दोलन सत्तावादी सामाजिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु सफलतापूर्वक लामबंदी करते हैं।

5-7 lelkef;d fo'o e vlekurk gr nyhy

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, समानता एक सापेक्ष संकल्पना है और उसे विद्यमान असमानताओं के प्रसंग में समझना पड़ता है। असमानता सभी समाजों का एक सार्वभौम अभिलक्षण है और इसका प्रतिरोध सभी सामाजिक संबंधों के प्रति बुनियादी रहा है। फिर भी, असमानता अभी तक उन विभिन्न वैचारिक व्यवस्थाओं के संदर्भ में समकालीन समाजों में विधिकृत है, जो असमानता के सभी रूपों की आवश्यकता व वैधता की व्याख्या करती हैं। इस प्रकार, समानता को समझने के लिए, समानता के विरुद्ध तर्कों को समझना वांछनीय है।

लोगों के बीच असमानता को ज़ायज ठहराती परम्परागत विचारधारा के अधिकांश रूप लक्षणतः धार्मिक रहे हैं। उदाहरण के लिए, सभी प्रमुख धर्म – चाहे हिन्दू–धर्म हो, बौद्ध–धर्म हो या कन्फ़्यूशिअनिज़्म– एक प्रशिक्षण–अवधि एवं उन कर्मकाण्डों के पालन के माध्यम से जो शुद्धता की गारण्टी देते थे, एक सांस्कृतिक अभिजात वर्ग तक ज्ञान के एक विशेष प्रतीक को पहुँचा देने में विश्वास करते थे। प्रत्यक्षतः सभी धर्म असमानता के अभिप्राय से ही जमे थे। यदि हिन्दू–धर्म वर्ण–व्यवस्था को उचित ठहराता था, यही बात ईसाइयत और इस्लाम के मामले में भी थी जहाँ दासता को स्वीकार किया जाता था। औद्योगिक पूँजीवादी समाजों के धर्म निरपेक्षीकरण के साथ ही, धार्मिक असमानता सामाजिक रूप से कम महत्त्वपूर्ण हो गई। परन्तु इसने सामाजिक डार्विनवाद के नाम पर सही ठहराये जाने वाली प्रजातीय एवं आर्थिक असमानता को जन्म दिया, जिसने 'उपयुक्ततम की उत्तरजीविता' सिद्धांत को एक विशेष महत्त्व प्रदान किया। यह विकास–सिद्धांत एवं प्राकृतिक चुनाव को मानव समाज के ऐतिहासिक विकास तक लाने का एक प्रयास था। जबकि यह आर्थिक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धात्मक पूँजीवाद को सही ठहराता था, इसने अन्य प्रजातियों एवं समूहों पर श्वेत प्रजाति की नैसर्गिक श्रेष्ठता तथा प्राकृतिक विकास व चुनाव के तयशुदा कानूनों के एक अपरिहार्य परिणाम को ज़ायज ठहराया। इसने प्रजातीय शुद्धिकरण एवं उन्मूलन नीतियों को सही ठहराते एक राजनीतिक दृष्टिकोण को जन्म देने हेतु मानवीय असमानता–संबंधी फासीवादी सिद्धांतों का उत्कट रूप ले लिया।

तीसरे, आधुनिक पूँजीवाद एवं उपयोगितावाद संबंधी विख्यात् राजनीतिक अर्थव्यवस्था ने भी असमानता को सही ठहराया। आर्थिक संघर्ष का यह दृष्टिकोण अधिकारात्मक व्यक्तिवाद, उपलब्धि एवं पहलकारी के विचार से जुड़ा है। उपयोगितावाद से जुड़ा असमानता–संबंधी आर्थिक सिद्धांत पूँजीवादी समाज की आम संस्कृति के लिहाज से बुनियादी है। असमानता–संबंधी राजनीति–सिद्धांतों एवं पण्यक्षेत्र से पैदा होने वाली असमानता–संबंधी व्यापक आर्थिक विश्लेषण के बीच भेद करना मुश्किल है। लॉक के राजनीतिक तर्क असमान आधिपत्यों हेतु अधिकार पर आधारित थे। इसी प्रकार, बाज़ार–संबंधी एडम स्मिथ के आदर्श ने तीन महत्त्वपूर्ण सामाजिक वर्गों की कल्पना की, यथा, पूँजी मालिक जो लाभ कमाते हैं, भू–स्वामी जो लगानों पर निर्भर थे और कामगार वर्ग जो वेतनों पर निर्भर था। उसने असमानता–संबंधी मुक्त–बाज़ार व्याख्याओं हेतु आधार प्रदान किया, खासकर आय असमानता के रूप में। यद्यपि स्मिथ की आर्थिक नीतियों की व्यापक आलोचना हुई, आधुनिक काल में मिल्टन फ्रीडमैन एवं एफ.ए. हयेक जैसे आर्थिक सिद्धांतवादियों द्वारा मुक्त–बाज़ार आर्थिक सिद्धांत–संबंधी एक पुनर्जागरण रहा है, जिनके सिद्धांत इच्छास्वातंत्र्यवाद के रूप में पुनर्जीवित होती व्यापक अर्थव्यवस्थाओं में बहुत ही प्रभावी रहे हैं।

उपर्युक्त से परे, समानता के विरुद्ध अनेक आम तर्क हैं। प्रथमतः, यह तर्क दिया जाता है कि समानता के विभिन्न अवयव हैं, जो परस्पर असंगत हैं। उदाहरण के लिए, अवसर एवं दशाओं की समानता परिणामों की असमानता में परिणत होने की संभावना रखती है, क्योंकि यदि कोई समाज प्रतिस्पर्धात्मक है तो इसे असमानता पैदा करने वाला पाया जाता है, यह देखते हुए कि हरेक व्यक्ति विजेता नहीं हो सकता। अवसर–संबंधी समानता का उदारवादी अर्थ असमानता में परिणत होने के लिए बाध्य है। दूसरे, समानता–संबंधी राजनीतिक योजनाएँ व्यवहार्य नहीं हैं। दशाओं की परिवर्तनकारी समानता अथवा परिणाम की समानता सुनिश्चित करने के लिए एक सर्वसत्तावादी एवं अधिकारवादी राज्य–व्यवस्था में परिणत होते राज्य द्वारा व्यापक सामाजिक एवं राजनीतिक नियमनों की आवश्यकता पड़ती है। तीसरे, समानता वांछनीय नहीं है, क्योंकि समानता–प्राप्ति उन दूसरे मूल्यों के साथ असंगत हो सकती है जो समान रूप से ही वांछनीय होते हैं जैसे स्वतंत्रता। दशाओं की बराबरी समानता ला

सकती है, परन्तु वह कुछ व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं को सीमित कर देगी। चौथे, स्तरीकरण–संबंधी प्रकार्यात्मक सिद्धांत का विश्वास है कि कुछ सामाजिक पद ऐसे होते हैं, जो पूरी समाज व्यवस्था के रखरखाव एवं निरंतरता के प्रति महत्त्वपूर्ण रूप से योगदान करते हैं। उन्हें अपने कार्य–सम्पादन के लिए विशेष कौशलों की आवश्यकता होती है। प्रतिभा को कौशल में बदलने के लिए भी कुछ समय के एक प्रशिक्षण अवधि की आवश्यकता पड़ती है, जिसमें प्रशिक्षण की प्रक्रिया से गुज़रने वालों का त्याग शामिल होता है। इस प्रकार, इन प्रकार्यात्मक पदों को सामाजिक प्रभेद के रूप में महत्त्वपूर्ण प्रलोभन रखने चाहिए, जिसमें विशेषाधिकार एवं दुर्लभ पारितोषिकों तक अननुपातिक पहुँच शामिल हो। संक्षिप्ततः, समाज उन अधिकारों व पारितोषिकों की भाषा में स्तरीकृत है, जो लोगों को त्याग करने एवं उन सामाजिक भूमिकाओं हेतु प्रशिक्षण प्रक्रिया से गुज़रने के लिए प्रेरित करते हैं जो माँगकारी हैं जबकि लाभकारी भी हैं। निष्कर्षतः विभिन्न सामाजिक स्तरों के बीच सामाजिक असमानता समाज की निरंतरता एवं रखरखाव हेतु सकारात्मक रूप से प्रकार्यात्मक है। चौथे, यह सुझाव दिया जाता है कि आर्थिक लिहाज से असमानता के अनेक महत्त्वपूर्ण सामाजिक कार्य हैं, समाज के लिए भी और विशिष्ट सामाजिक समूहों के लिए भी। उदाहरण के लिए, कम वेतन और उससे जुड़ी ग़रीबी इस बात के जिम्मेदार होंगे कि एक सुसम्पन्न समाज में 'कुत्सित कार्य' सम्पन्न किया जाए। यदि कोई व्यक्ति कार्य–विशेष पर ध्यान दिए बग़ैर वही आर्थिक वेतन पाता है, तब कुत्सित अथवा प्रतिष्ठा घटाता कार्य कभी भी सम्पन्न नहीं होगा। ग़रीबी के कलंक की लोगों को काम के लिए बाध्य करने और सामान्य उत्पादकता में योगदान देने में एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक भूमिका है।

पाँचवे, धन–सम्पत्ति संबंधी असमानताएँ उच्च व मध्य वर्गों के जीवन–स्तर के उनके जीवन को अधिक आरामदायक एवं आनन्ददायक बनाकर मूल्यपूर्ति करने में महत्त्वपूर्ण हैं। यह बात भी है कि निम्न वैतनिक सार्वजनिक क्षेत्र को परिदान देते हैं, क्योंकि वे आदर्श–स्वरूप जनसंख्या के उन ज़्यादा सम्पन्न क्षेत्रों की अपेक्षा करों में अपनी आय के अधिक प्रतिशत का योगदान देते हैं, जो सामान्यतः लेखाकारों की सेवाएँ लेकर और अपने रोज़गार की दृष्टि से कर–छूटों का दावा करके कराधान से बचते हैं। असमानता के पक्षपोक्षक कड़े तर्क देते हैं जिनके अनुसार ग़रीब का वित्तीय महत्त्व डॉक्टरों, कल्याण सेवाओं, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं व धार्मिक सम्प्रदायों जैसे व्यावसायिक रोज़गारों के प्रति उनके योगदान में भी पाया जाता है। चूँकि ग़रीब ही उन समूहों के मुख्य ग्राहक होते हैं, ग़रीब लोग न सिर्फ व्यावसायिक समूहों को वरन् आधि–व्यवसाय एवं वैश्यालयों को भी रोज़गार प्रदान करते हैं। साथ ही, ग़रीब दिन–पुरानी डबलरोटी व फल, सैकण्ड–हैण्ड कपड़े व घटिया स्तर की उपभोक्ता–वस्तुएँ जैसी कुछ मदों की उपयोगिता को बढ़ाते हैं। संक्षिप्ततः, किसी न किसी प्रकार के असमानता चाहे धन–दौलत के रूप में हो या शक्ति अथवा प्रतिष्ठा के रूप में, अपरिहार्य होने के साथ–साथ वांछित भी है।

5-8 lekurk dh ekDlokn vo/kkj.kk

मार्क्सवादी–लेनिनवादी दर्शन में, समानता की परिभाषा है 'वर्गों का खात्मा और सभी के लिए समान सामाजिक स्थिति'। यह समाज में लोगों की अभिन्न स्थितियों, परन्तु भिन्न–भिन्न प्रसंगों में भिन्न–भिन्न ऐतिहासिक युगान्तर तथा भिन्न–भिन्न वर्गों के बीच को इंगित करती है। उदारवादी समाज में, समानता को कानून के समक्ष समानता के रूप में लिया गया है, जबकि आदमी द्वारा आदमी का शोषण, आर्थिक व राजनीतिक असमानता तथा कामगार लोगों के लिए अधिकारों का वास्तविक अभाव आदि अस्पृष्ट रहते हैं। उदारवादी सिद्धांत हर व्यक्ति के सम्पत्ति रखने के अधिकार से शुरू होता है,

परन्तु मुख्य बात, यानी उत्पादन साधनों के संबंध, पर ध्यान नहीं दिया जाता है। मार्क्सवाद इस आधारवाक्य से शुरू होता है कि चाहे यह आर्थिक समानता हो यानी भौतिक समृद्धि के उत्पादन, वितरण व उपभोग के क्षेत्र में; राजनीतिक समानता हो यानी वर्गों, राष्ट्रीय या अन्तरराष्ट्रीय संबंधों के क्षेत्र में अथवा सांस्कृतिक समानता यानी सांस्कृतिक मूल्यों के उत्पादन, वितरण व उपभोग क्षेत्र में, सभी शोषण वर्गों के उत्पादन व समापन साधनों के निजी स्वामित्व की समाप्ति के बग़ैर असम्भव हैं। जैसा कि मार्क्स ने लिखा, 'हम वर्गोन्मूलन चाहते हैं और इस अर्थ में हम सम्पन्न हैं।' इसी प्रकार, एंजेल्स ने लिखा कि समानता हेतु माँग या तो रुदन करती सामाजिक असमानताओं के खिलाफ़, अमीर व ग़रीब, सामंती शासकों व कृषिदासों, दासों व स्वामियों, छके हुए व भूल से मरते हुए के बीच अनुबंधों के खिलाफ स्वयं–जात प्रतिक्रिया रही है; अथवा माँग समानता एवं एक आंदोलनकारी साधन के रूप में काम करने के रूप में उठी है, ताकि कामगार मध्यवर्गीय माँग के खिलाफ एक प्रतिक्रिया के रूप में उठी है, ताकि वर्ग को हानि पहुँचाने के लिए भी काम करना चाहिए जिनके अनुसार न तो लोकतंत्र होगा, न ही अधिकार। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस प्रकार के वर्ग लागडाट के बावजूद पूरी तरह समाप्त नहीं होंगे। समष्टिकरण के पश्चात्, स्टालिन का दावा था कि औद्योगिककर्मियों व किसानों के बीच आर्थिक विरोध और सामाजिक फासले घट रहे हैं और धुंधले पड़ रहे हैं। वर्ग अब भी अस्तित्व में थे, परन्तु वे अब सामंजस्यपूर्ण थे और एक वर्गरहित समाज के निर्माण से पूर्व करीब आने लगे थे। सभी नागरिकों के पास एक से राजनीतिक अधिकार थे; सभी को चुनावी मताधिकार और सोवियत के लिए निर्वासित होने हेतु योग्यता प्राप्त थी। दूसरी ओर, अननुसारकों के लिए कोई समानता अथवा संभावित प्रतिपक्ष के लिए समान अवसर नहीं होते – एक ऐसा पहलू क्रांति के पश्चात् जिसकी रोज़ा लक्ज़मबर्ग द्वारा आलोचना की गई।

(तत्कालीन) सोवियत संघ के संविधान ने, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व राजनीतिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन के सभी क्षेत्रों में सोवियत नागरिकों की समानता के अधिकार लागू किए। क्रांति पश्चात् शुरू के वर्षों में, राज्य की नीतियाँ समानता की दिशा में ही अभिजात थीं। इसके उदाहरण थे : हर प्रकार के काम के लिए प्रत्यक्षतः समान पारिश्रमिक, समान रसद, सम्पत्ति का समकरण, पद व पदवियों की समाप्ति। तथापि, तदोपरांत, जब औद्योगीकरण शुरू हुआ, प्रौद्योगिकी की माँगों ने प्रशिक्षण तथा कुशल श्रमिकों का नियोजन व विशेषज्ञता आवश्यक कर दिए। आगे चलकर इसने बुद्धिजीवियों के एक नए वर्ग को जन्म दिया, जिसके परिणामस्वरूप अनेक वैज्ञानिकों, कलाकारों, अग्रणी पार्टी कार्यकर्त्ताओं, वरिष्ठ सरकारी कर्मचारी को कभी–कभी साधारण कर्मचारी की तुलना में लगभग 20–30 गुना अधिक वेतन दिया जाता था। 1930 के दशकांत में एक वर्ग प्राधार की स्थापना देखी गई जो उच्च रूप से भिन्न था।

स्टालिन युग की नितान्त असमानताएँ सामान्य तौर पर न्यूनतम वेतन बढ़ाकर, उत्पादन साधनों के समाजीकरण, एक समान वेतन निर्धारण, उपभोक्ता वस्तुओं की एक अपेक्षाकृत मानकीकृत आपूर्ति आदि द्वारा दूर की गईं। इसी प्रकार, बुनियादी खाद्यपदार्थों, भाड़ों, लाने में बहुत मदद की। सामाजिक स्थिति व आय में अंतर भी कल्याणकारी सुविधाओं व उपलब्ध सेवाओं जैसे मुफ़्त स्वास्थ्य रक्षा, शशिुगृहों, दिवस शिशु–शिक्षण संस्थाओं आदि द्वारा कम किए गए हैं। महिलाओं की सम्पन्नता में काफी प्रगति हुई। पुनः, 1956 में शिक्षण प्रतिष्ठानों में सभी तरह का शिक्षा–शुल्क माफ कर दिया गया। एक सुव्यवस्थित वृहद–स्तरीय विकास व शिक्षा–सुविधाओं के प्रोत्साहन ने, कम से कम कानून में, किसी भी सोवियत नागरिक को उसकी आवश्यकताओं व योग्यता के अनुसार शिक्षा पाने में समर्थ बना दिया।

तथापि, राजनीतिक क्षेत्र ने एक भिन्न चित्र प्रस्तुत किया। सरकार की व्यवस्था केन्द्रीकृत व सत्तावादी रही और पूरा का पूरा राजनीतिक क्षेत्र सी.पी.एस.यू. के पोलिटब्यूरो द्वारा नियंत्रित होता रहा। यह समूह उत्पादन साधनों व राष्ट्रीय संसाधन वितरण पर प्रत्यक्षतः नियंत्रण रखता था, सैद्धांतिक नीति बनाता था और प्रेस, रेडियो व टेलीविज़न पर सख्त नियंत्रण द्वारा जनमत से काम लेता था। इसने जनसाधारण को विद्यमान असमानताओं व उनके कार्य से पूरी तरह वाकिफ़ होने से रोका।

पश्चिमी उदारवादी समाजों में, जहाँ समानता की बतौर एक राजनीतिक व कानूनी सिद्धांत सांवैधानिक रूप से गारण्टी है, इसके स्वीकरण अथवा इसके विरोध की ओर व्यक्ति के रुख को वैचारिक मत की एक कार्यव्यक्ति के रूप में सहन किया जाता है। सर्वाधिक भिन्न मत को सहन करना राजनीतिक समानता के सिद्धांत हेतु अनिवार्य है। उस सीमा तक तुलना किए जाने पर जहाँ तक कि इस प्रकार की माँग उदारवादी में अथवा साम्यवादी राज्य–व्यवस्थाओं में पूरी की गई हो, सोवियत मॉडल पर, हम पाते हैं कि परवर्ती बहुत पीछे है।

जब व्यवहार में जो असमान हैं उनके दमन के रूप में असमानता में सही ठहराते हुए आह्वान करना– चाहे सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के माध्यम से अथवा किसी अन्य सत्तावादी राज्य–व्यवस्था के माध्यम से – औद्योगिक समाज की सामान्य प्रवृत्ति की अनुकूलता से इतना परे है कि व्यक्ति मार्क्सवाद द्वारा प्रतिपादित और तत्कालीन साम्यवादी राज्यों में प्रचलित आर्थिक व सामाजिक समानता के सिद्धांत पर संदेह करने को मजबूर हो जाता है।

5-9 lkjk'k

उपर्युक्त चर्चा से, हम समानता की संकल्पना को निम्न प्रकार से समझ सकते हैं :

- समानता अनिवार्यतः आधुनिक और प्रगतिशील एक मूल्य और एक सिद्धांत है। यह राजनीतिक समतावाद के रूप में आधुनिकीकरण की संपूर्ण प्रक्रिया से जुड़ी है। इसको उग्र–उन्मूलनवादी सामाजिक परिवर्तन के एक मापदण्ड के रूप में भी देखा जाता है। यह लोकतांत्रिक राजनीति के विकास से संबंधित है।
- समानता को सिर्फ़ विद्यमान असमानताओं के संदर्भ में समझा जा सकता है। सभी मानव समाज वर्ग, प्रतिष्ठा, ताकत व लिंग–संबंधी किसी न किसी प्रकार की सामाजिक असमानताओं द्वारा अभिलक्षित हैं। समानता के बारे में बतलाते हुए, जबकि लास्की ने इसको वंशानुगत विशेषाधिकारों, अवसरों की उपलब्धता व सामाजिक–आर्थिक लाभों हेतु सार्वभौम उपगम्य से जोड़ा, ब्रायन एस. टर्नर थोड़ा आगे गए हैं और समानता की बात अवसरों की उपलब्धता, शर्तों की समानता तथा नतीज़े अथवा परिणामों की समानता के शब्दों में करते हैं।
- उदारवाद का उदय सामंतवाद एवं धार्मिक विशेषाधिकारों के खिलाफ़ लड़ने से जुड़ा हुआ था। यह सिर्फ़ कानूनी समानता की बात करता था जिसका मतलब था दो बातें : कानून का शासन और कानून के समक्ष समानता। लोकतंत्र के आगमन ने राजनीतिक क्षेत्र में समानता का आह्वान किया यानी राजनीतिक–प्रक्रिया में भाग लेने हेतु हर नागरिक का अधिकार। यह सिद्धांत वोट देने के अधिकार, चुनावों में खड़े होने, सार्वजनिक पद ग्रहण करने तथा जाति, वर्ण, लिंग, धर्म, भाषा आदि के आधार पर कोई भेदभाव न करने में व्यक्त किया गया। सामाजिक–आर्थिक

समानताओं पर ध्यान मार्क्सवादी लेखकों द्वारा खींचा गया, जबकि मार्क्सवादी यह मानते थे कि समानता सिर्फ़ वर्गोन्मूलन तथा एक वर्गरहित समाज के निर्माण द्वारा ही लाई जा सकती है, उदारवादी लेखकों का दावा था कि इसको सामाजिक विधि–विधान एवं न्यूनतम वेतन, कर माफ़ी, बेरोज़गारी लाभ, मुफ़्त शिक्षा आदि के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। सामाजिक समानता जाति, मत, धर्म, भाषा, प्रजाति, लिंग, शिक्षा आदि पर आधारित भेदभावों की बात करती थी। समसामयिक उदारवादी संकल्पना को साम्यवाद में रखकर समझा जाता है।

- उदारवाद के भीतर एक दिलचस्प विवाद स्वतंत्रता एवं न्याय के साथ समानता के संबंध का रहा है। जबकि शुरुआती नकारात्मक उदारवाद समानता व स्वतंत्रता के बीच एक अन्तर्निहित संवाद देखता था और पूर्ववर्ती को परवर्ती के लिए ख़तरा मानता था, सकारात्मक उदारवाद नियमित पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के माध्यम से स्वतंत्रता एवं समानता के बीच मेल–मिलाप में विश्वास रखता है। इसी प्रकार, यद्यपि रॉल्स जैसे दार्शनिकों ने समानता को अपने न्याय–संबंधी सिद्धांत का आधार बनाया है, फिर भी, वे असमानताओं के औचित्य–प्रतिपादन में तो भी इस शर्त के साथ नहीं हिचकिचाते हैं कि हम असमानताओं को समाज में न्यूनतम लाभांवितों की मदद करनी चाहिए।
- इस बात पर निरन्तर बहस होती रही है कि क्या उदारवादी देशों में पर्याप्त समानता आती है। काफ़ी हद तक, उदारवादी देशों में समानता की समस्या राजनीति व अर्थशास्त्र के बीच जटिल संबंध में उतरकर आती है। यद्यपि लोग कल्याणकारी राज्य के आगमन से पहले के मुकाबले सामाजिक रूप से अब ज़्यादा सजक हैं, फिर भी बल, प्रतिष्ठा व सम्पत्ति के लिहाज से बुनियादी असमानता कायम है। व्यावसायिक क्षेत्र में वंशानुगत अथवा व्यक्तिगत उपलब्धियों के माध्यम, दोनों से सम्पत्ति के वितरण में व्यापक असमानताएँ हैं। सरकार, एक कल्याणकारी राज्य होते हुए भी, कल्याण एवं संसाधनों के पुनर्वितरण से इंकार नहीं कर सकती परन्तु उसी समय, उसे एक मुक्त पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं पर ध्यान देना पड़ता है। हाल ही में, टैलकॉट पार्सन्स एवं किंग्सली डैविड जैसे अमेरिकी समाजवादी ने घोषणा की है कि असमानता सभी सामाजिक संगठनों के लिए एक आवश्यक शर्त है। असमानता के उद्‌गम की चिन्ता में पड़ने की बजाय उन्होंने यह दर्शाने का प्रयास किया कि सामाजिक विशिष्टीकरण एवं स्तरीकरण सामाजिक प्राधारों के लिए अनिवार्य हैं। तथापि, जबसे समानता संबंधी धारणा का इतिहास काफी हद तक आन्तरायिक और कभी–कभी हिंसक रहा है, यह अभीष्ट है कि समानता पर बहस, हर नया संकल्प एक नई बहस हेतु शुरुआत के साथ, एक कभी न खत्म होने वाली बहस हो।

5-10 vH;kl

1. समानता का अर्थ व प्रकृति तथा असमानता से उसका संबंध स्पष्ट करें।
2. समानता के विभिन्न आयामों पर चर्चा करें।
3. स्वतंत्रता व न्याय के साथ समानता का संबंध स्पष्ट करें।
4. समसामयिक समाजों में समानता की भूमिका पर चर्चा करें।
5. समसामयिक संसार में असमानता पर एक टिप्पणी लिखें।
6. समानता–संबंधी मार्क्सवादी संकल्पना को स्पष्ट करें।